Chap-2

द्वितीय अध्याय

गुजरात के साठोत्तरी हिन्दी साहित्य का परिचयात्मक विकासक्रम

साठोत्तरी गुजरात के हिन्दी साहित्य का परिचयात्मक विकासक्रम

वैसे तो गुजरात में हिन्दी साहित्य का प्रारंभ गुजराती साहित्य के समानान्तर ही हुआ है। प्रारंभिक गुजराती साहित्यकारों ने ब्रजभाषा में काव्य रचनाएँ निरंतर की हैं। अखा, नरसी मेहता, दयाराम, प्रेमानन्द आदि की वरिष्ठ कवि श्रृंखलाएँ इसके जीवन्त उदाहरण हैं। स्वतंत्र रूप से हिन्दी काव्य सृजन का क्षेत्र ब्रजभाषा से अधिक संलग्न रहा है। ब्रजभाषा में काव्य सर्जना का परिमाण अत्यन्त व्यापक रहा है। यह समृद्ध परम्परा मध्यकाल से आधुनिक काल तक सतत अग्रसरित रही है।

गुजरात के हिन्दी साहित्य के इतिहास के विषय में आधिकारिक रूप से बहुत कम लिखा गया है। डॉ. भगवत शरण अग्रवाल ने गुजरात के हिन्दी–साहित्य के इतिहास के विभिन्न आयामों, पक्षों के शोधपरक अनुशीलन एवं विश्लेषण करने वाले आधुनिक विद्वानों एवं अनुसंधानकर्ताओं के नामों का उल्लेख किया है। इनमें श्री के का शास्त्री, पोपट भाई शकर भाई, डॉ. हरीश द्विवेदी, डॉ. नंद टी. हिंगोराणी, डॉ. भोपाल सिंह राठौड़, डॉ. आर. एस. प्रजापति, प्रो. कमल मेहता, डॉ. अम्बाशंकर नागर, डॉ. जगदीश गुप्त, डॉ. रामकुमार गुप्त, डॉ. भ्रमर लाल जोशी, डॉ निर्मला आसनाणी, देवी सहाय गुप्त, डॉ. अरुणा शुक्ला, डॉ. रमण लाल पाठक, डॉ मुहब्बत सिंह चौहान, डॉ. के. एम. शाह, डॉ. सुशीला आहूजा, डॉ नरेश चन्द्र पण्ड्या, डॉ. चन्द्रकान्त मेहता, डॉ. हरीश शुक्ल, डॉ. गोवर्धन शर्मा, डॉ. राजन नटराजन, डॉ नटवरलाल उपाध्याय, डॉ. मदन गोपाल जानी, डॉ. कंचन लाल ब्रह्मभट्ट, डॉ. कुंज बिहारी वार्ष्णेय आदि के अतिरिक्त डॉ. श्री राम नागर, डॉ भगवत शरण उपाध्याय, डॉ. किशोर काबरा, डॉ. विष्णु विराट चतुर्वेदी, डॉ. दयाशंकर शुक्ल, डॉ. नवनीत गोस्वामी, डॉ. महावीर सिह चौहान, डॉ. एन. पी. सिंह, डॉ. सोमाभाई शर्मा, डॉ. भूपतिराम सांकरिया, डॉ. शशिबाला अरोरा, डॉ. मदन गोपाल गुप्त, डॉ. मालारविन्दम्, डॉ. रानू मुखर्जी, डॉ. शैलजा भारद्वाज, डॉ. सुदर्शन मजीठिया, सुन्दरलाल कथूरिया, द्वारका प्रसाद साँचीहर, बादाम सिंह रावत आदि के नाम उल्लेखनीय हैं।[१]

गुजरात में उपलब्ध हिन्दी साहित्य के संदर्भ में अधिकांश विद्वानों का अभिमत है कि आधुनिक काल के प्रारंभ से ही गुजरात में हिन्दी साहित्य सृजन प्रवृत्ति अन्यान्य हिन्दी क्षेत्रों के समानान्तर ही विकसित हुई है। इस आधुनिक काल में सृजित हिन्दी साहित्य की पृष्ठभूमि बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ से ही विकसित होने लगी थी। बीसवीं शताब्दी के प्रारंभ में स्थापित हुए कुछ विशिष्ट कवियों के संक्षिप्त विवरण ध्यातव्य हैं –

रत्नो भगत :

भुज के ममुआरा गाँव के अहीर रत्नो भगत जी का जन्म सन् १८७५ में हुआ। इनके गुरु संत आत्माराम थे। अपने सदुपदेशों से इन्होंने तत्कालीन कुरीतियों को दूर करने का प्रयास किया था। इनके हिन्दी तथा गुजराती में स्फुट पद मिलते हैं जिन पर कच्छी भाषा का प्रभाव परिलक्षित होता है। इन्होंने नश्वर देह, घट में अंतर्यामी के निवास तथा स्वस्वरूप एवं ज्ञान के महात्म्य के गूढ़ और प्रभावोत्पादक भावों का वर्णन अव्यवस्थित भाषा में किया है। 'भजन–सार सिंधु' में इनके पद संग्रहीत हैं।[२]

सागर महाराज :

सागर महाराज का मूल नाम जगन्नाथ दामोदर त्रिपाठी था। इनका जन्म जंबुसर गाँव (गुजरात) में सन् १८८३ में हुआ। **'दीवाने सागर'** भाग १, २ में इनकी हिन्दी रचनाएँ संकलित हैं। संपादित रचनाओं में **'ग़ज़लिस्तान', 'कलापीनो के कारव', 'संतोनी वाणी'** तथा **'अक्षयवाणी'** प्रमुख हैं। इनके हिन्दी पद सरल एवं बोधगम्य हैं जिसमें ज्ञान और प्रेम मुख्य विषय है। इन्होंने संस्कृत, गुजराती, उर्दू और फारसी के शब्दों का भी खुल कर प्रयोग किया है। इनके पदों में संगीतात्मकता है।[३]

ओंकारेश्वरी :

इनका मूल नाम ललिता बहन था। ये चौबीस ब्राह्मण जाति की थी। दाम्पत्य जीवन की असफलता के कारण इनका मन वैराग्योन्मुख हुआ। सन् १९३३ में ऋषिकेश में इनका देहान्त हुआ। इनकी प्रकीर्ण रचनाओं में पद, सखियाँ, गरबा, कक्का आदि उपलब्ध हैं। इनमें विशिष्ट प्रकार की परमात्मलीनता, मस्ती एवं अन्तर की निश्छल एवं उद्दाम भक्ति के दर्शन होते हैं। इन स्वानुभवी संत कवयित्री की वाणी भाव प्रवण एवं मार्मिक है।[४]

रंग–अवधूत :

इनका मूल नाम पांडुरंग था। इनका जन्म सन् १८९९ में गोधरा में हुआ तथा मृत्यु सन् १९६८ में नारेश्वर में हुई। इन्होंने दत्तात्रेय को निराकार निरंजन ब्रह्म का मूर्त रूप बताकर अवधूत–सम्प्रदाय की दत्तोपासना को नया स्वरूप दिया।[५]

इनकी रचनाएँ हिन्दी, गुजराती, मराठी, संस्कृत एवं अंग्रेजी आदि विभिन्न भाषाओ में एवं गद्य–पद्य दोनों रूपों में उपलब्ध हैं। **'अवधूती मौज'** नामक ग्रंथ में इनके हिन्दी भजन सकलित हैं। इनकी रचनाओं में 'श्री गुरु लीलामृत', 'दत्त–बावनी', 'पत्रगीत', 'संगीत गीता' आदि विशेष प्रसिद्ध हैं। इन्होंने अपनी रचनाओं में पारस्परिक वैरभाव दूर कर ज्ञान, भक्ति, ईश्वर–प्रेम तथा नामजप पर बल दिया है। इनकी भाषा मिश्रित तथा भाषा–शैली परिष्कृत, सचोट, सारगर्भित एवं मार्मिक है।

मगनलाल पटेल 'पतील' :

श्री मगनलाल पटेल 'पतील' का जन्म सन् १९०५ में अंकलेश्वर (भरूच, गुजरात) में हुआ। इनकी ५७ पुस्तकें प्रकाशित हैं। लेखन के अतिरिक्त इनकी संगीत तथा चित्रकला में भी रुचि है। इन्होंने गुजराती, हिन्दी तथा उर्दू भाषा में काव्य – लेखन किया है। हिन्दी में इन्होंने पद्य – कथा, खण्डकाव्य, सोनेट, मुक्तक, काव्य नाटिका तथा एक काव्य – संग्रह 'नयी तर्ज़ें' लिखे हैं।[६]

उपेन्द्राचार्य नृसिंहाचार्य :

उपेन्द्राचार्य भक्त एवं प्रसिद्ध विद्वान नृसिंहाचार्य के पुत्र थे। इनकी प्रमुख रचनाएँ हैं – **'श्री उपेन्द्र–गिरामृत', 'सुदामाख्यान', 'शुक–जनकाख्यान', 'कालीयमर्दन–आख्यान'** और **'दुर्वासाशापआख्यान'**। इन्होंने रास, पद, गरबा, कीर्तन, संवाद, आख्यान आदि

काव्य–रूपों में गुरु–सेवा महिमा, अनासक्ति तथा कृष्ण भक्ति मुख्य विषय लिए हैं। 'सुदामाख्यान' १८०० पंक्तियों में बद्ध है जिसमें पद, गीत, चौपाई, दोहा, साखी, गीति, हरिगीत, शिखरिणी आदि मात्रिक एव वर्णिक छन्दों का प्रयोग हुआ है।[७]

अविनाशानन्द जी :

विसनगरा नागर श्री अविशानन्द जी का जन्म सन् १८९० में वीरमगाम (गुजरात) में हुआ। इन्होंने **'वासुदेव माहात्म्य', 'निष्काय शुद्धि', 'भाषा भूषण', 'कविप्रिया', 'भाषा व्याकरण', 'काव्य मुलोल', 'रसरहस्य', 'हरिरस पिंगल', 'भगत पिंगल', 'वेदान्त पूर्ण'** आदि ग्रंथों की रचना की है। इनके स्फुट पदों का संग्रह **'अविशानन्द काव्य'** में किया गया है। इन्होंने प्रासादिक एवं मधुर भाषा में सत्संगी–कुसंगी के लक्षण, संत–असंतों के लक्षण, पतिव्रता नारी के लक्षण, श्रीजी की बाल लीला, दानलीला एवं अन्य विविध विषयो में काव्य–रचना की है।[८]

दूलेराय काराणी : दूलेराय काराणी कच्छ भुज के सहायक शिक्षणाधिकारी थे। इन्होंने ब्रज भाषा में कविता की है। इनके सन् १९४८ में प्रकाशित ग्रंथ **'गाँधी बावनी'** में मधुर एवं प्रासादिक भाषा में गाँधी जी की महानता का वर्णन किया गया है।[९]

कुँवरजी नथुं वैद्य :

इनका जन्म सन् १८८६ में हुआ। इनके भजनों एवं कीर्तन का संग्रह कर इनकी मृत्यु के बाद इनके पुत्र अमृतलाल कुँवरजी ने **'कुंवर जी कीर्तन संग्रह अने भक्ति विवेक'** प्रकाशित करवाया। इनकी हिन्दी रचनाओं की भाषा में प्रासादिकता है।[१०]

इला भाया काण :

इनका जन्म भावनगर में सन् १९०३ में हुआ। इनकी रचनाएँ **'कान वाणी'** (भाग–३) के नाम से प्रकाशित हैं। इन्होंने हिन्दी में दोहे, छप्पय, भजन, गीत आदि की रचना की है। गुजरात के चारण कवियों में इनका मूर्धन्य स्थान है। छन्दों और भाषा पर इनका पूरा अधिकार है। अपनी साहित्यिक और सामाजिक सेवा के कारण भारत सरकार ने इन्हें 'पद्मश्री' से सम्मानित किया है।[११]

सौ. इन्दुमती ह. देसाई :

इनका जन्म पेटलाद में सन् १८२५ में हुआ। इनके काव्य–संग्रह **'श्री कृष्ण मंजरी'** के दो भाग सन् १९३५ में उपलब्ध हुए हैं। प्रत्येक भाग में १०८ काव्य रचनाएँ हैं। हिन्दी भाषा में लिखे इनके काव्य उत्तम श्रेणी के हैं। भाषा में प्रासादिकता तथा मधुरता है। इनके काव्य में मीरा एवं महादेवी के काव्य जैसी भावानुभूति होती है।[१२]

कहान जी धर्म सिंह :

कहान जी धर्म सिंह राजकोट नगर के निवासी थे। इनकी रचनाएँ **'कहान काव्य'** में संग्रहीत है जो ग्यारह खण्डों में विभक्त है। इन्होंने सौराष्ट्र के प्राचीन–अर्वाचीन लोक साहित्य का सर्वप्रथम संकलन किया है। **'अध्याम भजन माला'** भाग–१, २ नामक ग्रंथ में हिन्दी, गुजराती की कुछ काव्य रचनाओं का संगलन भी इन्होंने किया है।[१३]

देवानन्द स्वामी :

इनका मूल नाम देवीदीन गढ़वी था। स्वामी नारायण सम्प्रदाय में दीक्षा लेने के बाद देवानन्द स्वामी के नाम से प्रसिद्ध हुए। इनका जन्म गुजरात के भाल क्षेत्र के बालोल गाँव में सन् १९०२ में हुआ।

इन्होंने गुजराती, ब्रजभाषा तथा राजस्थानी में विभिन्न राग–तालों में निबद्ध स्फुट सगीतात्मक पदों की रचना की है। इनके पदों में श्री कृष्ण के रूप–सौन्दर्य तथा भक्ति भावना का प्रभावी भाषा में अनूठा और मधुर वर्णन मिलता है। ये प्रथम आधुनिक कवि के रूप मे स्वीकृत दलपतराम के गुरु थे। इन्होंने दलपतराम को १४ वर्ष की आयु में स्वामीनारायण सम्प्रदाय में दीक्षित किया था।[१४]

निर्मला देवी :

इनका समय सन् १९२५ के आस पास का है। इन्होंने वेदान्त, काव्य, दर्शनशास्त्र विषयक अनेक उपाधियाँ प्राप्त की। इन्होंने राधा–कृष्ण विषयक प्रेमलक्षणा भक्ति के काव्यों की रचना की है – 'निर्मल रासोत्सव' (कृष्ण पद–संग्रह), 'निर्मल श्यामरस', (कृष्ण पद–संग्रह), 'निर्मल भाव कुसुम' (कृष्ण पद–संग्रह), 'निर्मल रसोत्सव', निर्मल आसव', 'निर्मल श्यामसुधा' (हिन्दी), 'निर्मल–निर्झरी' (हिन्दी), 'निर्मल ज्योति' (हिन्दी) आदि। इन्होंने संस्कृत, गुजराती तथा हिन्दी में रचनाएँ की हैं।[१५]

नीलकंठ :

ये बड़ौदा के निवासी थे। इन्होंने ब्रजभाषा में राधा–कृष्ण सम्बन्धी पद लिखे हैं। इनके एक पद से ज्ञात होता है कि ये श्रीमन्त मल्हारराव गायकवाड़ के समय में विद्यमान थे।[१६]

मनुभाई त्रिवेदी :

मनुभाई त्रिवेदी ने 'सरोद' उपनाम से मार्मिक भजन लिखे है और 'गाफ़िल' उपनाम से गज़लें। इन्होंने छन्दोबद्ध काव्य के साथ गद्य में वार्ताएँ, नाटिकाएँ और चिन्तन प्रधान लेख भी लिखे हैं। इनकी मृत्यु अहमदाबाद में सन् १९७१ ई. में हुई।[१७]

यशकरणजी अचलादानजी 'रत्नु' :

पोरबन्दर राज्य के निवासी तथा सम्मानित राजकवि श्री यशकरणजी अचलदानजी 'रत्नु' २०वीं शताब्दी के आरंभ से लेकर १९६६ ई. तक के समय मे विद्यमान थे। ये चारण साहित्य-ग्रंथों के विशिष्ट अभ्यासी होने के साथ ब्रजभाषा पाठशाला के शिक्षित पण्डित थे। इनकी रचना **'गृहस्थ धर्म-गुण प्रकाश बावनी'** उल्लेखनीय है।[१८]

याकूब खाँ :

याकूब खाँ २०वीं सदी के मुसलमान थे। ये बडौदा में रहते थे। ये 'जमादार याकूब अली खाँ गरबे वाले' के नाम से प्रसिद्ध थे। ये ब्रजभाषा प्रेमी तथा अपने समय से प्रसिद्ध गायक थे। इनकी ठुमरियों में कृष्ण-प्रीति और भक्ति-भावना व्यक्त हुई है।[१९]

मोतीराम कंडुजी :

श्री मोतीराम का जन्म चंपानेर परगना के गोधरा महाल (जिला पंचमहाल) के गाँव शहरों (शिवपुर) में चित्रोडा नागर परिवार में हुआ था। इन्होंने हिन्दी में कुंडलियाँ लिखी हैं। इन्होंने राधा, गोपी और कृष्ण से सम्बन्धित पद, नीति विषयक प्रकीर्ण पद और ब्रह्मज्ञान के पद लिखे हैं। इनके प्रमुख कृष्ण काव्यों में **'दाणलीला', 'चातुरी भाव-लीला', 'रासलीला', 'यशोदा जी का कृष्ण को पत्र', 'उद्धव जी के साथ गोपियों का कृष्ण को भेजा हुआ पत्र' (गरबी-पद), कृष्ण विरह के द्वादश मास, तिथि और वार के पद, श्रृंगार रस के पद (संख्या ३३), 'ओधव जी का गरबा', 'थाल के पद' (संख्या ३), सुदामा चरित्र और नरसिंह महेता के पिता जी का श्राद्ध** हैं। इन रचनाओं में मोतीराम की गोपी भाव सम्पन्न प्रेमलक्षणाभक्ति भावपूर्ण शैली में अभिव्यक्त हुई है। इन्होंने वैराग्य के **पद (संख्या ४२), नीति-उपदेश के प्रकीर्ण छप्पय (संख्या १७) और हिन्दी में कुण्डलिय** (संख्या ७) की रचना की है।[२०]

'कारक' :

हरकिसन लाल शिवलाल भगत 'करक' सूरत के निवासी थे। व्यापार कारणों से उन्हें रंगून में बसना पडा। परन्तु सूरत उनके मन में बसा हुआ था। उनकी रचनाएँ 'करक काव्य' (१९३०) में प्रकाशित है। सूरत शहर की मधुर स्मृतियों का वर्णन उन्होंने इस प्रकार किया है –

''यह सुरत शहर गुलझार लाल रंग चटकी,

ज्युं शरद पूर्णिमा गगन चाद‌ँनी छटकी।''[२१]

गुजरात में हिन्दी का क्रमिक विकास हुआ किंतु नरसिंह महेत या अखा ने जो कुछ रचा उसका स्वस्थ अनुगमन नहीं हुआ। अखा की भाषा में ब्रजभाषा की गरिष्ठता तथा विषय की गंभीरता तो थी किन्तु ब्रजभाषा का माधुर्य तथा उसकी सहजता नहीं थी। कालान्तर में दयाराम ने यह क्षति पूर्ण की। उन्होंने भक्तिभाव के कीर्तन-पद, कवित्त, सवैया भी लिखे और दोहा छन्द का विपुल प्रयोग कर 'दयाराम सतसई' की रचना भी की।

बाद में गोविन्द गिल्लाभाई तथा मेहरामणसिंह ने ब्रजभाषा-काव्य के सरस सौन्दर्य को प्रकट करते हुए बहुत ही समृद्ध और वैविध्यपूर्ण काव्य-सृजन किया। 'गोविन्द सागर' तथा 'गोविन्द ग्रंथावली' में इन्होंने ब्रजभाषा काव्य के उच्चस्थ मूल्यों को स्थापित किया। इसके साथ ही कच्छ (भुज) में स्थापित ब्रजभाषा काव्य पाठशाला ने भी अनेक सुशिक्षित तथा शास्त्रज्ञ ब्रजभाषा कवियों को तैयार किया जिन्होंने अपने कृतित्व से ब्रजक्षेत्रीय प्रख्यात कवियों की श्रेणियों में अपनी उपस्थिति दर्ज कराई।[२२]

गुजरात में सृजित हिन्दी साहित्य का स्वरूप नव जागरण काल से आधुनिक काल के परिवर्तित सोच की प्रासंगिक धारा से बहुत अच्छा तालमेल स्थापित नहीं कर सका। वैचारिक परिवेश में गुजरात का हिन्दी साहित्य अपनी रूढ़ अस्मिता में ही अग्रसरित होता रहा। दर्शन, आध्यात्म्य, भक्ति और श्रृंगार की पुरावर्तित सोच ही साहित्य सृजन के केन्द्र में टिकी रही। कोई उल्लेखनीय बदलाव दर्ज नहीं हो पाया।

स्वतंत्रता काल का आधुनिक पटल भी इस रूढ़ प्रवृत्ति को आन्दोलित नहीं कर पाया। हॉ, गांधीवादी विचारधारा का प्रभाव गुजराती साहित्य पर अधिक पडा था जिसको यत्किंचित प्रतिछाया हिन्दी साहित्य पर अनुभासित हो रही थी।

गुजरात में गुजराती एवं हिन्दी को राजभाषा के रुप में स्वीकार किया गया है। गुजरात में हिन्दी साहित्य अकादमी, गुजरात विद्यापीठ, गुजरात प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति, गुजरात हिन्दी प्राचरिणी सभा आदि विभिन्न साहित्य-संस्थाओं की स्थापना हुई जिससे हिन्दीतर प्रदेश होते हुए भी गुजरात में आधुनिक युग में विपुल मात्रा में काव्य रचना हुई है।

गुजरात में दो प्रकार के हिन्दी कवि है। एक हिन्दी मातृभाषा के कवि, जो विभिन्न हिन्दी भाषी राज्यों-उत्तर प्रदेश, राजस्थान, बिहार, मध्यप्रदेश आदि से आकर गुजरात में बस गए हैं; दूसरे वे, जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है। डॉ. किशोर काबरा के अनुसार **''यहाँ गीतकार हैं, गजलकार हैं, छांदस कवि हैं, अछांदस कवि हैं, रसवादी कवि हैं, जनवादी कवि हैं, ललित कवि हैं, दलित कवि हैं, समीक्षक कवि हैं, अनुवादक कवि हैं, गुजराती भाषी हिन्दी कवि हैं, हिन्दी भाषी गुजराती भाषी कवि हैं।''**[२३]

आधुनिक हिन्दी कविता एक ओर परम्पराओं से जुड़ी है तो दूसरी ओर उस पर पाश्चात्य प्रभाव भी है। मध्यकाल में छन्दों और अलंकारों से बोझिल, वास्तविक सौन्दर्य

से दूर हुई कविता आधुनिक काल में अनावश्यक छन्दों एवं अलंकारों का त्याग कर एक नए स्वरूप में आई। प्रबन्ध-काव्यों के साथ-साथ मुक्तक के सभी रूपों मे विपुल साहित्य-सृजन हुआ। विषय-वैविध्य एवं आकर्षक शिल्प प्रयोग किए गए।

गीत, ग़ज़ल, छन्दबद्ध एवं अछान्दस रचनाओं के साथ जापानी छन्द-हाइकु में भी काव्य रचना हुई। डॉ. भगवतशरण अग्रवाल ने जापानी छन्द हाइकु में काव्य-रचना कर उसे भारत भर में लोकप्रिय बनाया।

दो हाइकु देखिए –

१) ''सजाये मौत / मंजूर है मुझको / तुम्हारे बिना।''[२४]

२) ''गिनता रहा / माला के मनकों को / गुनाह नहीं।[२५]

शिल्प एवं अभिव्यक्ति कौशल में भी अनेक नवीनताएँ मिलती हैं। छायावादी, नई कविता वादी प्रगतिवादी सभी प्रकार की रचनाएँ मिलती है। प्रकृति का सौन्दर्य-निरूपण करता दृश्य –

''गोधूलि हो चली / अंशुमाली ने / प्रियं प्रतीची के /
मुख पर मल दी रोली / आम्रकुंज में / छिपी हुई काली कोयल /
सहसा पंचम में बोली और निशा ने / निशानाथ की आगवानी में /
बिखरा दी / तारों की झोली''[२६]

गुजरात के अनेक कवियों ने गीत और ग़ज़ल में प्रयोग किए हैं। इनमें भगवानदास जैन, सुलतान अहमद, दयाचन्द जैन, अश्विनी कुमार पाण्डेय, द्वारिका प्रसाद, सुरेश शर्मा 'कान्त', सुलभ धंधुकिया, रामचेत वर्मा, ऋषिपाल धीमान, विजयकुमार तिवारी, नवनीत ठक्कर, अब्बास अली ताई, अशोक नारायण, शिवा कनाटे, अरूणसिंह बारहट, भागवत

प्रसाद मिश्र, धरमविजय पंडित, जोजफ अनवर, दिनेश देसाई आदि प्रमुख हैं। अन्य रचनाकारों में जादवजी पटेल, दिनेशचन्द्र, शेखर जैन, कुन्दन माली, कैलाशनाथ तिवारी, हरी सिंह चौधरी, फूलचंद गुप्ता, भगवतशरण अग्रवाल, रमेश चन्द्र शर्मा, अंबाशंकर नागर, अविनाश श्रीवास्तव, किशोर काबरा, कमल पुंजाणी, घनश्याम अग्रवाल, दयाचन्द जैन, जयसिंह 'व्यथित', वसन्तकुमार परिहार, रमाकान्त शर्मा, मुकेश रावल, विष्णु 'विराट' आदि का नाम प्रमुखता से लिया जा सकता है। अनेक कवियों की रचनाएँ विभिन्न संग्रहों में तथा पत्र–पत्रिकाओं में निकल रही है।

गुजरात में कवियों की तरह हिन्दी कवयित्रियाँ भी रही है जिन्होंने भक्ति–काव्य की रचना की है। इनमें अचरत बा, ओंकारेश्वरी, रूपांबाई, राजकुंवर सोरठयानी, फूलकुंवर, गवरी बाई प्रमुख है। आज चालीस से अधिक महिलाएँ कविता–सर्जन में लगी है जिनमें से अठ्ठाईस के एक या एकाधिक काव्य–संग्रह निकल चुके हैं। इनकी कविताएँ समसामयिक है जिसमें जीवन के विभिन्न पहलुओं में नारी–हृदय का चित्रण है। इनकी कविताओं में नारी के विभिन्न रूपों प्रेमिका, पत्नी, माता, संयोगिनी, वियोगिनी, प्रेमी या पति से पीड़ित या छली गई, बहन, कोमल हृदया पुत्री, आक्रोशित या इन्तजार करती हुई – का चित्रण हुआ है।

डॉ. अम्बाशंकर नागर के अनुसार – ''आज, जो खड़ी बोली हिन्दी इस महान देश की राजभाषा है, उसके उद्‌भव और विकास दिलचस्प हैं। वह उत्तर भारत में जन्मी, गुजरात में पली और दक्षिण में सज–सँवरकर तैयार हुई है। दिन्दवी, गूजरी और दकनी इसी के विविध ना हैं। दक्षिण से फिर उत्तर पहुँचकर यही भाषा हिन्दू, उर्दू, हिन्दुस्तानी कहलाई और आज यही भाषा विश्व के सबसे बड़े गणतंत्र भारत के राजभाषा – पद पर

प्रतिष्ठित है। इसके निर्माण और विकास में गुजरात की भूमिका को सप्रमाण, सोदाहरण स्पष्ट करना ही हमारा उद्देश्य है।

गुजरात ने हिन्दी भाषा और साहित्य के विकास में जो योगदान दिया है, वह परिमाण और गुणवत्ता – दोनों ही दृष्टियों से अत्यंत महत्वपूर्ण है। 'हिन्दी' से हमारा तात्पर्य किसी एकरूपा भाषा से नहीं है। वह एक भाषा–परम्परा है, जिसमें व्रज, अवधी, डिंगल, खडीबोली आदि सभी भाषा–शैलियों का समावेश हो जाता है।

विगत चार दशकों में गुजरात के अंचल में हिन्दी की जो शोध–खोज हुई है उसमे यह तथ्य प्रमाणित हो गया है कि गुजरात के संतों और भक्तों ने व्रजभाषा में और राजाश्रित चारणों ने डिंगल में सैकड़ों उत्कृष्ट ग्रंथ रचे हैं। किन्तु इस सत्य से अभी बहुत कम लोग अवगत हैं कि जो खड़ी बोली आज राजभाषा के पद पर प्रतिष्ठित है, उसके उद्‌भव और विकास में भी गुजरात के सूफी कवियों का महनीय योगदान है। 'गुजरात की हिन्दुस्तानी काव्यधारा' इसी तथ्य को उजागर करने का गवेषणात्मक प्रयास है।''[२७]

गुजरात में सन् १९६० के बाद हिन्दी कविता में जो सामयिक संचेतना का संस्पर्श दिखाई देता है, वह वस्तुतः हिन्दीभाषी क्षेत्रों की काव्य–सर्जना से विभाजित रहा है। संचार और सम्पर्क के साधनों के विकास के साथ–साथ वैचारिक विमर्श के धरातल भी निकट आए हैं। मीडिया की तकनीकी सुविधाओं ने सोच के पटल विस्तृत भी किए हैं तथा निकटस्थ भी बनाए हैं। यही कारण है दिल्ली, आगरा, बनारस, पटना, भोपाल, इन्दौर, जयपुर आदि नगरों में प्रसरित वैचारिक आयाम सुदूर गुजरात, महाराष्ट्र, तमिलनाड़, केरल के रचनाकारों को भी सहमति के स्वर में संस्पर्शित करते रहे हैं।

डॉ. किशोर काबरा ठीक ही कहते हैं – ''सत्य शिवत्व की सौन्दर्यानुभूति का अभिव्यक्त रूप ही कविता है। कविता जीवन और जगत् की रसात्मक मीमांसा है। एक

ओर जहाँ इसे मिट्टी बाँधती है, वहीं दूसरी ओर इसमें सातों आसमान खुलते हैं। यह अन्तर्जगत् के सभी रहस्यो का उद्घाटन करती है और बहिर्जगत् के सभी यथार्थों का सामना करती है। यह समकालीन भी है और कालातीत भी, गह समसामयिक भी है और शाश्वत भी। देश, काल एवं व्यक्ति से जुडकर भी इनसे सदा असंयुक्त रहनेवाली कविता स्, चित् और आनद की सहोदरा है।''[२८]

डॉ. काबरा आगे कहते हैं – गुजरात अपनी सांस्कृतिक धरोहर एवं साहित्यिक थाती के लिए प्रसिद्ध है। यहॉ की कला–चेतना और उदात्त जीवन–दृष्टि सभी को स्वयं में समाहित करने और सभी मे स्वयं को खोलने की द्वि आयामी मानसिकता से जुड़ी है। गुजराती साहित्य का प्रणयन यहाँ की अनिवार्यता है और हिन्दी साहित्य का सृजन यहॉ की उदात्तता। अनिवार्यता व्यक्ति को अन्तर्मुखी बनाती है, उदात्तता बहिर्मुखी। कविता इन दोनों को सेतु की तरह थामे हुए है। नरसिंह महेता से लेकर आज तक चलनेवाली सरस्वती–पुत्रों की परंपरा ने जिन काव्य–मूल्यों एवं मानदंडों का विकास किया है, वे भारत की किसी भी भाषा में लिखे गए साहित्य के समकक्ष अपनी अर्थवत्ता, स्तरीयता और शाश्वती की घोषणा कर सकते हैं। आज तक गुजरात में डिंगल, ब्रज, अवधी, गूजरी, हिन्दुस्तानी एवं खड़ी बोली के लगभग दो हजार समर्थ कवियों ने अपनी वाणी के पुष्प समय–देवता के चरणों में अर्पित किए हैं। एक मात्र कच्छ की व्रजभाषा पाठशाला ने इतने कवि प्रदान किए हैं कि आश्चर्य होता है। कई गुजराती कवियों ने समान अधिकार से हिन्दी में भी लिखा है। यह परंपरा बीसवीं सदी के मुहाने तक चली आई है और इक्कीसवीं सदी में प्रवेश कर रही है। इस समय गुजरात में तीन सौ से अधिक हिन्दी कवि अपनी कलम का उत्स प्रकट कर रहे हैं। मुद्रण, प्रकाशन, प्रसारण, वितरण एवं विज्ञापन के सीमित

साधन होते हुए भी गुजरात के हिन्दी कवियों की काव्य–कृतियाँ निरन्तर प्रकाशित होती रही है, हो रही हैं, होती रहेंगी।

गुजरात के समकालीन हिन्दी कवियों में कई प्रतिष्ठित और यशस्वी कवि हैं, कई समर्पित और चर्चित कवि हैं, कई नवोदित और उदीयमान कवि हैं, कई विस्मृत और उपेक्षित कवि हैं। यहाँ गीतकार हैं, ग़ज़लकार हैं, छांदस कवि हैं, अछांदस कवि हैं, रसवादी कवि हैं, जनवादी कवि हैं, ललित कवि हैं, दलित कवि है, समीक्षक कवि है, अनुवादक कवि है, गुजराती भाषी हिन्दी कवि हैं, हिन्दी भाषी गुजराती कवि हैं।

धागे को पकड़ता हूँ तो पूरी माला मेरी लेखनी की नोक पर नृत्य करने लगती है।

गुजरात में राष्ट्रीय स्तर के कई कवि हैं; जिनमें से कुछ के व्यक्तित्व में काव्यत्व एवं आचार्यत्व तिल–तन्दुलवत् घुल–मिल गए हैं। कुछ शुद्ध कवि हैं। अहमदाबाद निवासी **डॉ. अम्बाशंकर नागर** हिन्दी–जगत् के प्रतिष्ठित आचार्य, विद्वान समीक्षक एवं रससिद्ध कवि हैं। 'चॉद, चाँदनी और कैक्टस्' आपका प्रसिद्ध काव्य–संग्रह है। इनके 'प्रम्लोचा' खंडकाव्य में प्रणय और प्रत्यभिज्ञान का ऊर्जस्वित रूप प्रकट हुआ है। अहमदाबाद के ही **डॉ. भगवतशरण अग्रवाल** प्रभावपूर्ण कवि, गीतकार एवं हाइकु–लेखक हैं। आपके काव्य संग्रहों में 'खामोश हूँ मैं', 'बस, तुम ही तुम', 'प्यासी धरती : खाली बादल' एवं मिश्रित काव्यविधा–संग्रह 'अकह' प्रकाशित हुए हैं। हाइकु–संग्रहों में 'शाश्वत क्षितिज' एवं 'टुकड़े–टुकडे आकाश' प्रमुख हैं। विभिन्न भाषाओं में अनूदित हाइकु–संग्रह 'अर्घ्य' भी काफी चर्चित हुआ है। **अविनाश श्रीवास्तव** बड़े समर्थ कवि, गीतकार एवं समीक्षक हैं। इनके छह काव्य–संग्रह प्रकाशित हैं : 'मानसिक सन्निपात और टूटे हुए एवरेस्ट', 'समान्तर रेखाओं का त्रिकोण', 'पिछली बहार के सूरजमुखी', 'ठहरी हुई धूप', 'छूटे तट–बन्धों पर पुनः' और 'परिवेश गगन बदले क्षण–क्षण'। मियागाँव करजण में वर्षों तक

आर्चाय-पद पर रहने के बाद अब अहमदाबाद में स्थिर होकर साहित्य-सेवा करने वाले डॉ. रमाकान्त शर्मा के 'उगते शब्द', 'अशब्द अर्थ', 'नवद्वीप', 'एक अर्थ', 'अथेति', 'मौत से दो हाथ' आदि काव्य-संग्रह खूप प्रसिद्ध हैं।

अहमदाबाद की ही बात लें तो डॉ. सुलतान अहमद पठान ने जनवादी चिन्तन एव गजल के तेवरी-पक्ष को उजागर करते हुए चार काव्य-ग्रंथ लिखे है : 'खामोशियो मे बन्द ज्वालामुखी', 'कलंकित होने से पूर्व', 'दीवार के इधर-उधर' और 'उठी हुई बाहो का समुद्र'। बसन्तकुमार परिहार ने विचार-कविता और लम्बी कविता को नए आयाम दिए है। इनके 'अधनगा सूरज' और 'चिंदी-चिंदी अस्तित्व' काव्य-संग्रह चर्चित हुए है। इसी तरह भगवत प्रसाद मिश्र 'नियाज' के गीत-संग्रह 'गीत-रश्मि' और खण्डकाव्य 'कारा', डॉ. रामकुमार गुप्त के काव्य-संग्रह 'बिंदिया के बोल', 'क्षण का सौदागर' तथा 'धुएँ का शहर', डॉ. शेखर जैन के काव्य-संग्रह 'घरवाला' और 'कठपुलती का शोर', डॉ. विनोद दीक्षित के 'उछालें और गलचियाँ' तथा 'आकाश के सात', जयसिंह 'व्यथित' लिखित प्रबंध-काव्य 'राघवेन्द्र', 'दलितों का मसीहा', 'बाल कृष्ण', 'कैकयी के राम' तथा गीत-संग्रह 'गीत-निर्झर' और 'युग-दर्पण' अपने-अपने समय में चर्चित रहे हैं। इन सभी कृतियों ने गुजरात को एक नई पहचान दी है।

बड़ौदा के डॉ. पारूकान्त देसाई की दो काव्य-कृतियाँ प्रकाशित हैं – 'बिजली के फूल' और 'मिलन के क्षण चार'। जामनगर के डॉ. कमल पुंजाणी के तीन काव्य-संग्रह आए हैं – 'क्षितिज से दूर', 'प्रतिबिम्बित इन्द्रधनुष' और 'विवशता से बँधे हुए'। चीखली के डॉ. अब्बास अली ताई 'अजनबी' का ग़ज़ल संग्रह 'नक़्शे क़दम' भी प्रकाशित हुआ है। इन सब कवियों ने अपनी – अपनी जमीन की तलाश की है।

कविता को अपना मुख्य स्वर बनानेवाले अहमदाबाद के कुछ कवियों ने खूब लिखा है, कम छपवाया है, किन्तु मंचों, संस्थाओं एवं प्रचार-माध्यमों से निरन्तर जुडे रहने के कारण कविता को जन-जन तक पहुँचाया है। **भगवानदास जैन** गुजरात के प्रसिद्ध गजलकार हैं। इनका गजल-संग्रह 'जिंदा है आईना' बडा चर्चित हुआ है। **डॉ. दयाचंद जैन** का गजल सग्रह 'दर्द का रिश्ता' भी प्रकाशित हुआ है। इन जैन बंधुओं का एक सम्मिलित गीत-गजल-सग्रह 'रोशनी की तलाश' भी प्रकाशित हुआ था, जो अपने समय में खूब चर्चित हुआ। **डॉ. द्वारकाप्रसाद साँचीहर** के गीत-संग्रह 'गीत रजनीगंधा के' ने सुधी पाठकों को अपनी ओर आकर्षित किया है। **रमेशचन्द्र शर्मा 'चन्द्र'** के काव्य-संग्रह 'सुधियाँ शेष रह गई' और 'जाने क्या बाद कही' में जीवन के दार्शनिक पक्ष को अभिव्यक्ति मिली है। **सुरेश शर्मा 'कान्त'** का 'जाती बार न मुख मोड़ो' एक दीर्घ काव्य है आँसुओं से भीगा-भीगा। उर्दू के साथ-साथ हिन्दी में लिखनेवाले **ज़ोज़फ अनवर** के मुक्तकों का एक संग्रह 'पगडंडियाँ' आया है। इसी तरह बड़ौदा के **डॉ. विष्णु 'विराट'** एक सशक्त ओजपूर्ण राष्ट्रीय चेतना से जुड़े कवि हैं। उनका व्रजभाषा छंद-संग्रह 'फैली पलाश के कानन लौं' खूब चर्चित हुआ है। 'बालवाटिका' बाल गीत-संग्रह एवं 'कर्ण' खंडकाव्य ने भी पाठकों को प्रभावित किया है। भरूच के **राजेन्द्र 'काजल'** अच्छे गीतकार-ग़ज़लकार हैं। उनका 'चौलादेवी' खण्डकाव्य प्रकाशित है।

अन्य चर्चित कवियों में अलिन्द्र के **डॉ. सूर्यदीन यादव** की काव्य-कृतियाँ 'हिन्दी वाहिनी' एवं 'फागुन बीते जा रहे', जूनागढ़ के **डॉ. घनश्याम अग्रवाल** लिखित काव्य-संग्रह 'धरती गाए रे', 'सच तो यही है', 'नई कविता' और 'शब्द-यात्रा' तथा **श्री प्रकाश मिश्र** के काव्य-ग्रंथ 'मौन पर शब्द' ने गुजरात की काव्य चेतना को नए आयाम दिए हैं।

मौन लेखन में लगे हुए गुजरात के कुछ प्रौढ एवं वयोवृद्ध कवि आज भी अपनी कलम चला रहे है। **द्वारिकाप्रसाद चौबे 'द्वारिकेशु'** का 'द्वारिकेशु सतसई', **डॉ. प्रभास शर्मा** का 'तृष्णा' तथा **डॉ. अरविन्द जोशी** का 'शेष है जो कहना है' काव्य संग्रह व्यक्ति से विराट तक की चिन्तन-यात्रा से जुड़े अनमोल ग्रंथ हैं। गुजरात में कुछ ऐसे कवि भी है जो अपने व्यवसायिक कारणों से अन्यत्र रहते है और बीच-बीच में अहमदाबाद आकर यहाँ की काव्य धारा से जुड जाते हैं। **नथमल केड़िया** अहमदाबाद और कलकत्ता दोनों महानगरों को समान भाव से निवास स्थान बनाए हुए हैं। इनका एक सुवासित कविता-संग्रह 'क्षण कस्तूरी गंध के' आया है। इसी तरह रतलाम के **समरथमल 'गुलजार'** भी वर्ष मे छह महीने अहमदाबाद में रहते हैं। इनके तीन गीत-संग्रह प्रकाशित हैं : 'रसगंगा', 'रसधारा' और 'रसकलश'।

अहमदाबाद के कुछ नवोदित कवियों और गजलकारों ने पिछले दो - तीन वर्षों में अपनी लेखनी में जो धार पैदा की है, वह पाठकों को अपनी ओर आकर्षित करने लगी है। **विजयकुमार तिवारी** का ग़ज़ल-संग्रह 'निर्झर', **अश्विनीकुमार पाण्डेय** का ग़ज़ल-संग्रह 'अहसास के साये तले', **कैलाशनाथ तिवारी** के काव्य-संग्रह 'जिन्दगी की राह में' तथा 'अंजुरीभर प्यास', **पदमचन्द्र सिंघी** काव्य-संग्रह 'रिसते घाव', **डॉ. दिनेशचन्द्र सिन्हा** की काव्य कृति 'जीवन क्या जो एकाकी है', **नरेश चन्द्रकर** का काव्य-संग्रह 'हथेलियों की भीड़', **डॉ. नवनीत ठक्कर 'अल्प'** का काव्य-ग्रंथ 'स्याही भीगे पल', **दिनेश देसाई 'जान'** का गजल संग्रह 'दिल का दरिया' तथा बड़ौदा के **डॉ. नवीन** प्रकाश सिंह का काव्य संग्रह 'मुट्ठीभर आकाश' आदि कृतियों ने यह सिद्ध किया है कि गुजरात की हिन्दी कविता भारतीय कविता धारा के समानान्तर चल रही है।

हिन्दी कवयित्रियों का भी अभाव नहीं है गुजरात में। हाँ, यह बात अवश्य है कि अधिकाश का मूल स्वर कविता के बजाय कथा-साहित्य है। अहमदाबाद की **डॉ. सुधा श्रीवास्तव** और **डॉ. इंदिरा दीवान** की पहचान उपन्यास लेखिकाओं के रूप में अधिक है, लेकिन उनका एक-एक काव्य-संग्रह प्रकाशित है। सुधा जी की 'दंशों के घेरे में' और इदिरा जी की 'दर्द' शीर्षक काव्य-कृतियाँ पाठकों में चर्चित हुई हैं। **डॉ. प्रणव भारती** का भी औपन्यासिक कृतियों के अलावा 'एक त्रिशंकु सिलसिला' काव्य-संग्रह प्रकाशित है। **श्रीमती दिव्या रावल** का 'मौन का आँगन', **श्रीमती प्रतिभा पुरोहित** का 'अनुभूति', **डॉ. शान्ति सेठ** का 'नीलाम्बर के नीचे', **डॉ. शशि अरोरा** का 'रेत पर हस्ताक्षर' एवं **शीला घोड़े** का 'आँसू के हस्ताक्षर' काव्य-संग्रहों में नई एवं पुरानी पीढ़ी की प्रबुद्ध कवयित्रियों के हर्ष-शोक का जीवन्त प्रस्तुतीकरण हुआ है। **डॉ. अंजना संधीर** मूलतः उर्दू, पंजाबी और गुजराती की खबर लेखिका, कवयित्री एवं पत्रकार हैं, पर हिन्दी में उसी आत्मविश्वास के साथ लिखती हैं। उर्दू के प्रसिद्ध शायर जनाब रहमत अमरोहवी के 'इजाफा' गजल-संग्रह के हिन्दी लिप्यन्तरण के साथ ही अंजना जी का अपना हिन्दी गजल-संग्रह 'बारिशो का मौसम' प्रकाशित हुआ है। इसी तरह **मंजु भटनागर 'महिमा'** के 'बोनसाई संवेदनाओं के सूरजमुखी' काव्य संग्रह में नारी-जीवन के अव्यक्त भाव-बिम्बों का मानवीकरण किया गया है।

अहमदाबाद की इन कवयित्रियों के अलावा बड़ौदा की **नलिनी पुरोहित** का 'अनुभूति', **सुषमा श्रीवास्तव** का 'दूर क्षितिज तक' एवं **मीराँ रामनिवास** का 'अंकुर' काव्य संग्रह प्रकाशित हुए हैं। राधनपुर की **मरियम गज़ाला** का गज़ल-संग्रह 'क्षितिज की दहलीज पर' भी नए क्षितिजों की तलाश करता है।

गुजरात के विभिन्न अंचलों में रहकर कविता से जुडे रहने वाले कई नाम हैं, कई हस्ताक्षर हैं, कई चहरे हैं। यद्यपि इनके स्वतत्र काव्य-ग्रंथ प्रकाशित नहीं हुए हैं, पर ये जिस निष्ठा एवं समर्पण-भावना से लिख रहे हैं, वह स्तुत्य है, श्लाघ्य है, प्रणम्य है। इन कवियो में से कई के काव्य-सग्रह निकट भविष्य में प्रकाशित होने वाले हैं। विभिन्न काव्य-संकलनों पत्र-पत्रिकाओं, प्रसारण-माध्यमों एवं शहरों से जुडे निम्नलिखित कवि-कवयित्रियों को भी मै पूरे सम्मान के साथ 'पछुवॉ के हस्ताक्षर' में ले रहा हूँ :

अहमदाबाद – अनिल अरोरा, अमृतलाल जोशी, उत्तरा चीनूभाई, ऋतेश त्रिपाठी, डॉ. ऋषिपाल धीमान 'ऋषि', ओंकार अग्निहोत्री 'शिवम्', डॉ कन्हैयालाल चौहान 'चिराग', डॉ. कृष्णा गोस्वामी, गिरधारीलाल सराफ, गोपाल शुक्ल 'तपिश', गोपीचंद चौबे 'अशेष', चन्द्रपालसिंह यादव, चन्द्रमोहन तिवारी, डॉ. चन्द्रसेन नावाणी, जितेन्द्रसिंह चौहान 'पुष्प', ज्योति शर्मा, ताराकान्त ठाकुर, दीनबंधु द्विवेदी, धर्मनाथ मिश्र, पुष्पा शर्मा, प्रमीला शुक्ल 'किरण', प्रमोदशंकर मिश्र, बसन्त ठाकुर, मुंशीलाल मिश्र, मुनीश कुमार सिंह गौर, राजकौशल इसौलिया, डॉ. राजदेव तिवारी, ललिता शर्मा, विजयकुमार गुप्त, सन्तोष लंगर 'सुहास', सन्ध्या अग्रवाल, डॉ. सुभाष भदौरिया, सुलभ धंधुकिया, हरिप्रसाद शुक्ल, हरिवदन भट्ट, हरिसिंह नायक।

गाँधीनगर – डॉ. गोवर्द्धन शर्मा।

बड़ौदा – क्रान्ति येवतीकर, डाह्याभाई पटेल 'नवरंग', डॉ. माणिक 'मृगेश', डॉ. शिवा कनाटे।

सूरत – उमा अरोरा, चंपक भट्ट, डॉ. सविता गौड़।

भावनगर – नयना डेलीवाला, निर्मल भट्ट।

आणंद – मुकेश रावल।

कलोल – मस्तराम गहलोत 'मस्त'।

मियागाँव करजण – रजनीकान्त शाह।

उमरेठ – डॉ. सुरेशचन्द्र झा 'किंकर'।

दमण – डॉ. सुरेशप्रसाद सिन्हा।

साबरकुंडला – जादवभाई पटेल 'रश्मिभिक्षु'।[२१]

यह वर्गीकरण सम्पूर्ण नहीं है, यहाँ उल्लिखित अधिकांश साहित्यकार वे हैं जो नगर परिवेश में रहते हैं तथा जिनका प्रकाशित साहित्य बुद्धिजीवी लेखकों के दृष्टिपथ में आ चुका है। इस प्रकार बहुत से हिन्दी रचनाकार हैं जो अभी तक अन्यज्ञात या अज्ञातावस्था में मौन हैं, जिनका यथाप्राप्त विवरण आगे देने का प्रयास करेंगे।

गुजरात की समकालीन हिन्दी कविता के संदर्भ में डॉ. अम्बाशंकर नागर ने आधिकारिक रूप से कहा है कि – ''गुजरात में गुजराती की ही नहीं, हिन्दी काव्य-रचना की भी प्रसस्त परंपरा रही है। मध्यकाल में यहाँ के कवियों ने गुजराती में लिखने के साथ-साथ डिंगल, ब्रज, अवधी और खड़ी बोली में सुन्दर ग्रंथों का प्रणयन किया है। यहाँ के धर्म-सम्प्रदायों ने हिन्दी को धर्माश्रय और राजाओं ने राजाश्रय प्रदान किया था। वैष्णव, स्वामिनारायण, जैन, संत और सूफी संप्रदायों के आश्रय में यहाँ के कवियों के द्वारा हिन्दी में विपुल साहित्य रचा गया है। यहाँ के राजाओं ने स्वयं हिन्दी में रचनाएँ की हैं और उनके आश्रय में हिन्दी साहित्य खूब फूला-फला है। कच्छ के महाराव

लखपतसिंह ने तो सन् १७४९ ई. में कच्छ भुज में व्रजभाषा–पाटशाला (काव्यशाला) की स्थापना की थी, जिसमें व्रजभाषा में कविता करना सिखाया जाता था। न केवल गुजरात में, बल्कि सारे देश में यह अपने ढंग की एकमात्र काव्यशाला थी। यह संस्था भारत के स्वतंत्र होने तक विद्यमान रही। तत्पश्चात् राजाओं के राज्य समाप्त हो जाने के कारण, राजाश्रय के अभाव में, यह संस्था काल कवलित हो गई। इस काव्यशाला ने अपने दो सौ वर्षों के कार्यकाल में सैंकड़ों व्रजभाषा कवि तैयार किए। गुजरात के सुप्रसिद्ध कवि ब्रह्मानन्द और दलपतराम इसी काव्यशाला में प्रशिक्षित हुए थे।[३०]

हिन्दी की तरह उर्दू शेरोशायरी की भी परंपरा पुराने जमाने से गुजरात में रही है। सूफी फकीरों ने गुजरी (पुरानी हिन्दी–उर्दू) भाषा में मसनवियाँ लिखी हैं। आधुनिक उर्दू शायरी के बाब आदम 'वली' गुजरात के थे। उनका मजार अहमदाबाद में है। सूरत, भरूच, बड़ौदा, पालनपुर और अहमदाबाद उर्दू शायरी के मशहूर केन्द्र रहे हैं। आज भी गुजरात में उर्दू शायरी पुरबहार में है, जिससे प्रभावित होकर अनेक हिन्दी कवि भी ग़ज़ल, नजम और रुबाईयाँ लिख रहे हैं।

यह सुविदित तथ्य है कि आधुनिक काल में महर्षि दयानन्द सरस्वती और महात्मा गाँधी के सत्प्रयत्नों से हिन्दी भाषा को अखिल भारतीय लोकप्रियता प्राप्त हुई थी। भाषावार प्रांत रचना के पश्चात् जब सब राज्यों की स्वभाषाएँ राज्य भाषाएँ बनीं, तब गुजरात ही एक ऐसा राज्य था, जिसने गुजराती के साथ हिन्दी को भी अपनी द्वितीय राज्यभाषा के रूप में स्वीकार किया। गुजरात राज्य की भाषा विषयक इस उदार नीति के कारण यहाँ के स्कूल, कॉलेज और युनिवर्सिटीयों में हिन्दी के पठन–पाठन को पर्याप्त प्रोत्साहन मिला है। गुजरात में आज आठ विश्वविद्यालय हैं और आठों में एम. ए. और पीएच. डी. तक हिन्दी के पठन–पाठन की समुचित व्यवस्था है। इन विश्वविद्यालयों से

अब तक ४०० अनुसंधित्सु पीएच. डी की उपाधि प्राप्त कर चुके हैं और लगभग इतने ही शोधरत है। युनिवर्सिटीयों के अतिरिक्त गुजरात विद्यापीठ और गुजरात प्रान्तीय राष्ट्रभाषा प्रचार समिति के द्वारा भी गुजरात के गाँव-गाँव और घर-घर तक हिन्दी पहुँची है। कहने का तात्पर्य यह कि हिन्दीतर प्रदेश होते हुए भी गुजरात में हिन्दी काव्य-रचना के लिए अनुकूल वातावरण था, जिसके कारण आधुनिक युग में हिन्दी कविता को पुष्पित-पल्लवित होने के लिए पर्याप्त अवकाश मिला है।

आजादी से पहले हिन्दी, हिन्दीभाषी प्रदेश की भाषा थी। उसके बाद भारतीय संविधान द्वारा राजभाषा के रूप में मान्य हो जाने के कारण अब वह सारे देश की संपर्क-भाषा है। कश्मीर से कन्याकुमारी और कच्छ से कोहिमा तक वह परिव्याप्त है। देश की सामासिक संस्कृति को व्यक्त करने वाली सशक्त राष्ट्रभाषा के रूप में हिन्दी उभर रही है। हिन्दी के इसी अन्तर्प्रान्तीय रूप को गुजरात के परिप्रेक्ष्य में देखने का यह एक विनम्र प्रयास है।

गुजरात प्रदेश में पुराने समय से चली आ रही हिन्दी काव्य-परंपरा का अवलोकर कर चुकने के पश्चात् अब हम इस प्रदेश की समकालीन हिन्दी कविता पर विचार करेंगे।

आज की कविता के लिए कितने ही शब्द प्रचलित हैं, जैसे कि अर्वाचीन कविता, आधुनिक कविता, समसामयिक कविता, समकालीन कविता आदि। पर्यायवाची होते हुए भी इन काल साक्षेप शब्दों की अवधारणाएँ भिन्न-भिन्न हैं। 'अर्वाचीन' शब्द कालवाचक है; जो प्राचीन नहीं, वह अर्वाचीन है। 'आधुनिक' में अंग्रेजी के 'मॉडर्न' शब्द की छाया है, किन्तु हिन्दी साहित्य के इतिहासों में आधुनिक-काल भारतेन्दु से प्रारंभ होकर आज तक चल रहा है। कालवाची होने के साथ-साथ यह शब्द समाजवाची भी है। औद्योगीकरण और अर्थव्यवस्था भी इसमें समाविष्ट है। इसी प्रकार 'समकालीन' शब्द हम

जिस काल में रह रहे हैं, उस काल के दो–चार दशकों का ही वाचक है, अतः हमने इनमें से 'समकालीन' शब्द को चुना है, क्योंकि यह शब्द उन सभी अर्थों को ध्वनित करता है जो अर्वाचीन और आधुनिक में गर्भित हैं। इसके अतिरिक्त यह गुजरात के कवियो की पिछले दो–चार दशकों में लिखी गई हिन्दी कविता पर पूरी तरह लागू होता है।

समकालीन हिन्दी कविता, भाषा और भावबोध की दृष्टि से अत्यंत संश्लिष्ट है। जैसा कि पहले कहा जा चुका हें, पुरानी कविता डिंगल, ब्रज, अवधी में होती थी। आधुनिक काल मे आते–आते कविता खडी बोली में होने लगी। खड़ी बोली भी राजभाषा बन जाने के पश्चात् दिल्ली, मेरठ की भाषा न रहकर सारे देश की भाषा हो गई है। उसका स्वरूप प्रादेशिक प्रभावों के कारण तिलोत्तमा के रूप की तरह ऐसा विकसित हुआ है कि जिसे देखकर हतप्रत हुए बिना नहीं रहा जाता। प्रत्येक प्रदेश की समकालीन हिन्दी कविता की भाषा–भंगिमा अलग, मुहावरे–कहावतें अलग और बिम्ब–प्रतीक इतने संश्लिष्ट हैं कि जिन्हें देखकर ठगा–सा रह जाना पड़ता है। गुजरात के कवियों की हिन्दी कविता भी इसका अपवाद नहीं है। हिन्दी के इस अन्तर–भारती स्वरूप का साक्षात्कार करने के लिए समसामयिक हिन्दी कविता एक अच्छा साधन है। यदि प्रत्येक हिन्दीतर प्रदेश की समकालीन हिन्दी कविता के संकलन प्रकाश में आएँ तो उनसे हिन्दी के व्यापक स्वरूप के साथ भारत की सामासिक संस्कृति और इक्कीसवीं सदी की कविता के कथ्य और शिल्प के नए आयाम उजागर हो सकेंगे।

हिन्दीतर प्रदेशों में हिन्दी कविता करने वाले कवि दो तरह के हैं। एक वे, जिनकी मातृभाषा हिन्दी नहीं है; दूसरे वे, जिनकी मातृभाषा हिन्दी है और जो उत्तरप्रदेश, बिहार, राजस्थान, मध्यप्रदेश आदि हिन्दी-भाषी राज्यों से हिन्दीतर प्रदेशों में आकर बसे हैं। काव्य–रचना में दोनों को ही कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है।

हिन्दी भाषी प्रदेशों से अहिन्दीभाषी प्रदेश में आकर बसे हिन्दी भाषियों की सबसे बड़ी कठिनाई यह होती है कि वे हिन्दी भाषा–साहित्य की मुख्यधारा से कट जाते हैं। हिन्दीतर प्रदेशों में रहने के लिए आते समय, वे जिस भाषा–संपदा को अपने साथ लाते हैं, वह अंजुलि के जल की भाँति शनैः शनैः छीजती चली जाती है। उनकी भाषा में से पहले व्यंजना लुप्त होती है, फिर लक्षणा; शेष रह जाती है अभिधा। अभिधा से गद्य भले ही लिखा जा सकता हो, अच्छी कविता नहीं लिखी जा सकती। इन कठिनाइयों के बावजूद जो कवि संचार–माध्यमों के सहारे हिन्दी की मुख्यधारा से जुड़े रहकर प्रयत्नपूर्वक अपनी अंजुलि के जल को सहेज सके हैं, उनके अध्यवसाय की प्रशंसा की जानी चाहिए। अंग्रेजी में ऐसे लेखन को 'डायस्पोरिक' संज्ञा से अभिहित किया जा रहा है और समकालीन लेखन में उसे अलग से विशेष महत्त्व दिया जा रहा है।

इसी तरह जो हिन्दीतर भाषा–भाषी सोचते स्वभाषा में हैं और लिखते हिन्दी में हैं, उनको भी कवि–कर्म में कठिनाई होती है। इस प्रक्रिया के कारण उनकी अभिव्यक्ति परिष्कृत होकर उत्कर्ष को भी प्राप्त हो सकती है और अपना सत्व खोकर निस्तेज और प्रभावहीन भी हो सकती है। एक भाषा में सोचना और दूसरी में लिखना कठिन काम है, जिसको गुजरात के कवियों ने इस कौशल के साथ किया है कि उसकी जितनी प्रशंसा की जाय कम है।

हिन्दी की जिस मूलधारा की बात ऊपर की गई है, उसके संबंध में भी यहाँ कुछ कहना आवश्यक है। आदिकाल और मध्यकाल की दुर्गम घाटियों से होती हुई विकासोन्मुख हिन्दी काव्यधारा आधुनिक काल में प्रशस्त पथ पर अग्रसर हुई है। हिन्दी काव्यधारा का व्रजभाषा से खडी बोली में रूपातरित होना बीसवी सदी की एक महान घटना है। इसी तरह भक्ति और श्रृगार से मुक्त होकर हिन्दी कविता का समाजोन्मुख होना

भी उसकी उल्लेखनीय उपलब्धि है। इस प्रकार भाव और भाषा दोनों दृष्टियों से आधुनिक हिन्दी कविता ने अपने–आपको रूढ़ियों से मुक्त करके नए रूपों में ढाला है। स्वच्छदतावाद, छायावाद, सहस्यवाद, प्रगतिवाद, प्रयोगवाद, नई कविता से समकालीन क़विता तक वह निरंतर अग्रसर होती रही है और अब इक्कीसवीं शताब्दी में पदार्पण करने के लिए कथ्य और शिल्प के नए रूप–आकारों में ढल रही है।

यह सही है कि हिन्दी कविता एक ओर परंपरा से जुड़ी हुई है, दूसरी ओर यह पाश्चात्य प्रभावों को भी ग्रहण कर रही है। संस्कृत–प्राकृत की दुहिता होते हुए भी हिन्दी कविता को संस्कृत के वर्णवृत्त उसकी प्रकृति के अनुकूल प्रतीत नहीं हुए। जब तक व्रजभाषा, कविता का माध्यम रही, वर्णवृत्तों का थोड़ा बहुत प्रयोग होता रहा, किन्तु ब्रजी को अपदस्त करके जैसे ही खड़ी बोली काव्य भाषा बनी, उसे वर्णवृत्त रास नहीं आए, अतः उसने मात्रावृत्तों का अनुसरण किया। कालांतर में मात्रावृत्त भी उसे युगीन भावबोध की अभिव्यक्ति में साधक से अधिक बाधक प्रतीत होने लगे। परिणाम स्वरूप मात्रावृत्तों को छोड़कर हिन्दी कविता ने अंग्रेजी के 'ब्लेंक वर्स' के अनुकरण पर मुक्त छंद को अपनाया। इस प्रकार समकालीन हिन्दी कविता का मूल स्वरूप अछांदस हो गया। अब पुनः नवगीत, नवगजल, दोहे और हाइकु के रूप में हिन्दी काव्य–धारा छंदों की ओर लौट रही है।

छंदों की तरह अलंकारों का भी आधुनिक हिन्दी कविता ने परित्याग किया है। मध्यकालीन कविता–कामिनी छंद और अलंकारों के भार से इतनी दबी हुई थी कि काव्य–रसिकों का ध्यान छंदों की छटा और अलंकारों की जगमगाहट में ही उलझकर रह जाता था। कविता के वास्तविक सौन्दर्य से काव्य–रसिक प्रायः वंचित रह जाते थे। आधुनिक काल में कविता ने छंदों की तरह अनावश्यक अलंकारों का भी परित्याग किया।

बिम्ब और प्रतीकों से वह अपना श्रृंगार करने लगी। इस सादगी ने समकालीन कविता को एक नया स्वरूप प्रदान किया।

जैसा कि हम प्रारंभ मे कह आए हैं, 'आधुनिक' शब्द अत्यंत व्यापक है। वह कालवाचक भी है और प्रवृत्ति वाचक भी। हिन्दी साहित्य में इस शब्द का प्रयोग प्रायः सन् १८५७ ई. के पश्चात् लिखे गए आज तक के समस्त साहित्य के लिए होता है, किन्तु प्रवृत्ति की दृष्टि से आधुनिक साहित्य उसे ही कहा जायगा, जिसमें वैज्ञानिक और बौद्धिक दृष्टि निहित हो। अंग्रेजी की एक उक्ति है : 'ऑल कॉन्टेम्परेरीज़ आर नॉट मॉडर्न'। सभी समकालीन आधुनिक नहीं होते। इसी तरह पिछले डेढ सौ वर्षों में लिखा गया समस्त साहित्य आधुनिक नहीं कहा जा सकता। आधुनिक चेतना से युक्त साहित्य ही आधुनिक कहा जा सकता है। इसी अर्थव्याप्ति से बचने के लिए हमने 'आधुनिक' या 'अर्वाचीन' के स्थान पर 'समकालीन' शब्द का प्रयोग गुजरात की समसामयिक हिन्दी कविता के लिए किया है।

हिन्दी कविता की मूलधारा में स्वतंत्रता के स्वर्णिम विहान में ही हम आधुनिक चेतना को उदित होता देखते हैं। यह चेतना पूववर्ती स्वच्छंदतावाद, छायावाद, प्रगतिवाद से प्रयोगवाद और नयी कविता के रूप में अग्रसर होती हुई आज की कविता तक पहुँची है। इस अवलोकन से स्पष्ट है कि आधुनिकता केवल काल सापेक्ष नहीं, वह प्रवृत्ति सापेक्ष विकासशील प्रक्रिया है, जिसका विकास भारत में स्वातंत्र्योत्तर युग में हुआ है। वैश्विक परिप्रेक्ष्य में कविता के इस कालखंड को 'पोस्ट कोलोनियल' कहा गया है, जिसमें राजनैतिक गुलामी से मुक्त होने के बाद मानसिक गुलामी से मुक्ति की कविताएँ लिखी जा रही हैं।

इस भूमिका के पश्चात् अब हम गुजरात में लिखी जा रही समकालीन हिन्दी कविता का अवलोकन करेंगे।

समकालीन हिन्दी कविता की चार मुख्य विशेषताएँ हैं :

१. जीवन और जगत की बौद्धिकता से देखने का प्रयास

२. शोषण का विरोध।

३. वर्तमान व्यवस्था के प्रति आक्रोश और उसमें परिवर्तन का आग्रह।

४. प्रेम, सौन्दर्य और जीवन–दर्शन।

गुजरात के समकालीन हिन्दी कवियों की कविता में भी ये चारों विशेषताएँ स्पष्ट दृष्टिगत होती हैं। फर्क इतना ही है कि इन्होंने जहाँ इन सामयिक सत्यों को उजागर किया है, वहाँ परंपरा और सनातन सत्यों को भी नकारा नहीं है। इस प्रकार इन कवियों की कविता बौद्धिक, शोषण विरोधी और आक्रोशपूर्ण होते हुए भी निराशा और हताशा की कविता नहीं है। वह आस्था और विश्वास की कविता भी है। इन कवियों की मान्यता है कि अंधकार हटेगा, प्रकाश फैलेगा और मानव–जीवन भविष्य में सुखी होगा। इस प्रकार गुजरात की समकालीन हिन्दी कविता ध्वंसोन्मुख न होकर निर्माणोन्मुख कविता है। नव निर्माण, भारतीय राजनीति को ही नहीं, कविता को भी गुजरात की देन है। यही कारण है कि कटु यथार्थ, जीवन की जटिलता, उग्रता, आक्रोश, कुंठा, छटपटाहट के बीच भी बदलाव के प्रति आस्था की संयत अभिव्यक्ति इन कवियों की कविता में हमें देखने को मिलती है।

उपर्युक्त चार मुख्य विशेषताओं के आधार पर अब हम गुजरात की समकालीन हिन्दी कविता का अनुशीलन करेंगे :

१. जीवन और जगत को बौद्धिकता से देखने का प्रयास :

गुजरात के कवियों ने, अन्य समकालीन कवियों की भाँति जीवन और जगत को बौद्धिकता के चश्मे से देखा है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

जन्म से लेकर मरण तक दौड़ता है आदमी,
दौड़ते–ही–दौड़ते दम तोड़ता है आदमी।
एक रोटी, दो लँगोटी तीन गज कच्ची ज़मीन,
तीन चीज़ें ज़िन्दगी में जोड़ता है आदमी।[३१]

* * * *

आज सूरज की
डूबती किरणों से
एक नया पाठ सीखा हूँ –
लोग उगते सूरज को सिर झुकाते हैं।[३२]

* * * *

आज परिस्थिति वश किया गया / हर समझौता / त्रासदी की एक कड़ी है / और इन कड़ियों से बनी / श्रृंखला ही जीवन है / पहले जब मनुष्य / परिस्थितियों से / समझौता नहीं करता था / मारता था, मरता था / तब जीवन पराक्रमों का / मंगलसूत्र था / और मृत्यु / उसमें गुंथा सोने का मनका था।[३३]

जन्म, मरण, रोटी, कपडा, मकान, वास्तविकता का बोधपाठ और परिस्थिति–वश किए गए समझौतों से लेकर, जनतंत्र और संविधान तक कवियों की दृष्टि गई है :

> **मैं गुनहगार हूँ / आनेवाली सैंकड़ों पीढ़ियों के प्रति / जो पूछेंगी / जनतंत्र के इस आत्मविघातक / संविधान पर तुमने भी तो हस्ताक्षर किये थे।**[३४]

इसी तरह आज विश्व में फैले आतंकवाद और कौमी दंगों से लोग इतने संत्रस्त हैं कि कभी वे ओसामा बिन लादेन और कभी वे कारगिल के युद्ध को याद करते हैं :

ओसामा बिन लादेन / काश, तम मेरे देश में जन्मे होते / तो इतने वहशी / इतने बुज़दिल न होते / तुम्हें पता है / कारगिल के युद्ध में / गीता फिर से रची गई

दुनिया ने भी देखा / देश के चरित्र की परीक्षा / हिमालय पर ही होती है।[३५]

कौमी दंगों के कारण लोग अपने–आपको असुरक्षित महसूस करते हैं। उन्हें लगता है, वे एक बार घर से निकलने के बाद शायद सही सलामत नहीं लौटेंगे :

> **न कुत्ता रोता है / न बिल्ली रास्ता काटती है / मगर एक इरादा / भीतर थरथराता है / अगर बचा रहा / तो कुछ न कुछ / जरूर ले जाऊँगा घर।**[३६]

देश में फैली गरीबी, भुखमरी और फाकाकशों की मजबूरी की ओर भी कवियों की दृष्टि गई है :

> दुनिया को उँगलियों पे नचाती हैं रोटियाँ

कितने हसीन ख्वाब दिखाती हैं रोटियाँ।

देखा कभी जो आसमाँ में चौंदहवीं का चाँद,

फ़ाक़ाकशों को उसमें नज़र आती हैं रोटियाँ।[३७]

२. शोषण का विरोध :

समकालीन हिन्दी कविता का वादी स्वर शोषण का विरोध और संवादी स्वर व्यवस्था के प्रति आक्रोश है। समकालीन कवियों ने पूँजीवाद, औद्योगीकरण और उसके फलस्वरूप उत्पन्न शोषण का विरोध करने के लिए कविता को हथियार बनाया है। उन्होंने किसान, मजदूर तथा समस्त सर्वहारावर्ग की हिमायत की है। स्वतंत्रता के पश्चात्, होना तो यह चाहिए था कि देश समृद्ध और सुखी होता, किन्तु हुआ इसके विपरीत। परिणाम स्वरूप मोहभंग, संत्रास, कुंठा, अकेलेपन की भावना जनता में उभरी और उसका प्रलंबित-प्रतिबिम्ब कविता में भी उभरा।

समकालीन हिन्दी कविता का कमोबेश यही स्वरूप गुजरात में भी है। फर्क इतना है कि जो काव्य आंदोलन हिन्दी भाषी प्रदेश में कभी के समाप्त हो चुके, वे यहाँ अब शुरू हो रहे हैं। कुछ प्रभाव पाश्चात्य साहित्य और गुजराती कविता से भी इन कवियों ने ग्रहण किये हैं; किन्तु कुल मिलकर गुजरात की समकालीन कविता हिन्दी कविता के समानांतर ही चल रही है। यह बात दूसरी है कि कुछ कवि जहाँ जमाने के साथ कदम से कदम मिलाकर चल रहे हैं, तो कुछ आगे-पीछे भी हैं। यही कारण है कि स्वच्छंदतावाद से लेकर अस्तित्ववाद तक की सब प्रवृत्तियाँ इन कवियों की कविता में देखी जा सकती हैं।

गुजरात के कवियों ने शोषण का डटकर विरोध किया है। किसानों और मजदूरों की हिमायत की है। आप इस तरह की कविता को नव्य-प्रगतिशील कविता कहें, चाहे जनवादी; इससे कोई फर्क नहीं पड़ता, क्योंकि सभी विचारधाराओं के कवियो ने समवेत स्वर से शोषण का विरोध किया है। कुछ उदाहरण द्रष्टव्य है :

चोर उचक्के और भ्रष्टाचारी / खुले आम, देश को लुटते हैं /

यह प्रजा / मूक तमाशबीन बन देखती है।[३८]

क्या इसी के लिए / हमने अपना भाग्य लेख / तुम्हारे हाथों में दिया था। / कि तुम उसमें हमारी साँसों के / विसर्जन का / निर्दय गीत लिखोगे।[३९]

कुहरे और धुंध में / एक सूरज उगा था / जिसके रथ में / सात घोड़े जुते थे / उससे यह महसूस हुआ था / ढोकर लाएँगे ये नई रोशनी / फिर से प्रकाश फैलेगा / सबको मिलेंगे। रोटी कपड़ा मकान / लेकिन सात घोड़े लड़ पड़े / फिर छा गया अँधेरा।[४०]

३. वर्तमान व्यवस्था के प्रति आक्रोश :

स्वतंत्रता से जनता को बड़ी-बड़ी आशाएँ थीं। विदेशियों के चुंगल से देश आजाद होगा तो हमें रोटी, कपड़ा और मकान मयस्सर होगा, भय और आतंक समाप्त होगा, देश में घी-दूध की नदियाँ बहेंगी, लेकिन ऐसा कुछ नहीं हुआ। जनता का मोह भंग हो गया आशाएँ खंड-खंड हो गईं। जिधर देखो अत्याचार, आतंकवाद, राजनैतिक अधःपतन। इन सबको देखकर जनता के मन में आक्रोश की भावना उत्पन्न हो और उसकी तल्ख और तीखी अभिव्यक्ति समकालीन कविता में हो, यह स्वाभाविक है। यह आक्रोश, तल्खी,

प्रगतिवादी, मार्क्सवादी कवियों के काव्य में ही नहीं, प्रत्येक कवि के काव्य मे है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं :

हम सब शतरंज के मोहरे हैं / कोई फ़र्जी है / कोई प्यादा है / नाम रूप
अलग–अलग / न कोई कम / न कोई ज्यादा है।
प्रजातंत्र के इस युग में भी / हम राजा के लिए लड़ते हैं / मारते हैं, मरते हैं /
इसलिए वहीं कि हम / कर्मयोगी हैं / निष्काम कर्म करते हैं / बल्कि इस
लिए कि हम बेजोरे हैं / और पीठ बल ही है / हमारी संपदा।[४१]

कब तक कराहते रहोगे तुम
भौतिकता की कारा में,
तोड़ो यह लौह श्रृंखला,
सस्तेपन से मुँह मोड़ो।[४२]

घर वह हो / जिसकी एक दीवार प्यार की हो / दूसरी विश्वास की हो /
तीसरी दोनों के एहसास की हो / चौथी दीवार हो कर्मठता और साहस की /
और छत हो जिसकी आकांक्षाओं की।[४३]

किताबी क्रांति / और मौखिक सदाचार की डुगडुगी / बजाना बंद कर
देखो / कब से झूठ की ड्योढ़ी पर / हर सनातन सच / श्वान–सा दुम हिला रहा है।[४४]

आओ आग से खेलें / मसान जगाएँ / डमरू बजाएँ / प्रजातंत्र के पोस्टर /
पिशाचों के हाथों थमाएँ / क्रांति की मशाल को जलने दो / ...मत घबराओ।[४५]

४. प्रेम, सौंदर्य और जीवन दर्शन :

जीवन और जगत को बौद्धिकता से देखने के बावजूद गुजरात के समकालीन कवियों ने जीवन में प्रेम और सौंदर्य के महत्व को भी नजर अंदाज नहीं किया है। आज के युग में मनुष्य प्रकृति से विकृति की ओर अग्रसर हो रहा है। इसका कारण यही है कि उसके हृदय में संचित प्रेम का स्त्रोत सूख गया है, जिसके कारण वह घर, समाज और विश्व से कटकर अपने – आपको अकेला महसूस करता है, इसीलिए कुछ कवियों ने अपनी कविता में शरीर, मन और आत्मा के धरातल पर उत्पन्न होनेवाले प्रेम को अपने गीत, गज़ल और प्रबंध–काव्यों में हृदयस्पर्शी ढंग से व्यक्त किया है। युगीन यथार्थ और गैर रोमांटिक माहौल में ये प्रेम–कविताएँ रेगिस्तान के बीच नखलिस्तान के जैसी सुखद प्रतीत होती है :

प्राण में फिर / गीत पंछी चहकते हैं / शोख पुरवैया / बचा नज़रें–गंध वातायन अहर्निश खोलती है / एक धागे में सभी ऋतुएँ पिरोये / सावनी बरसात झर–झर झर रही है/प्रणय उत्सव बन/हृदय में बिम्ब उगते हैं/[४६]

तुमसे मिलकर / अक्सर मुझे / ऐसा महसूस हुआ है कि जैसे सुरतरू / मेरे गुलदस्ते में उगा है / और कामधेनु तथास्तु कहती / मेरे द्वारे खड़ी है।[४७]

प्यार / पहले जात था / फिर भूल / फिर पैसा / और फिर / मजबूरियों का पत्थर।[४८]

हम सब / रेशम के कीड़े / रेशम के तार में लिपटे हुए / पर हैं हम सब बँटे हुए / दिखाई देते हैं आपस में सटे हुए / एक दूसरे से पूर्णतया कटे हुए।[४९]

प्रेयसी के लिए सागर से लहरों का दर्पण, बादल से बिजली का कंगन, रजनी से आँखों का अंजन, सरिता से कटि का कर्धन, पूनम से चाँदनी का चन्दन लाने के लिए तत्पर प्रेमी की उक्ति देखिए :

यदि तुम सोलह सिंगार सजोगी मनभावना,

तो सागर से लहरों का दरपन ला दूँगा।[५०]

कवियों की तरह कवयित्रियों ने भी प्रेम, विरह और समझौते को अपने ढंग से निरूपित किया है :

प्रेम / सावन की पहली बौछार–सा / विरह / जेठ की तपती दुपहर–सा

क्लेश / बेमौसम बारिश–सा / समझौता / धूप–छाँव–सा।[५१]

मैंने भी / प्रेम में तड़पकर / रेत की मछली / बनने से इन्कार कर दिया है।....
और अब कभी भी मैं / अवसर नहीं छोड़ती / लहर आते ही / हौले से सरक
कर / द्रुतगति से बह जाती हूँ / पानी में / क्योंकि मैंने भी / कसम खाई है /
न मरने की / तड़प कर।[५२]

प्रेम का ही व्यापक रूप अपने गाँव, राष्ट्र और ईश्वर के प्रति प्रेम है :

मेरा अपना गाँव

गाँव की माटी, मुझको प्यारी है।[५३]

* * * *

ऐ मेरे गाँव, मेरे प्यारे गाँव

फिर तेरी याद मुझे आई है।[५४]

धुआँ उगलनेवाले / इस शहर ने मुझे तोड़ा / इससे तो अच्छा था? हम बाप के गाँव में होते / झील में जाल डाल कर / मछलियाँ पकड़ते और जब तक झील में / पानी होता / उदास न होते।"[55]

आ गए कौन घाट / है इधर निरा दलदल / उधर भरा उथला जल / उजियारे मछुआरे / काँटे ले उदासीन अनियारे / खूब यहाँ / हंसों की मुद्राएँ / बगुलों के छल। – बंशीधर शर्मा

सरसों–सी खिली धूप में / दूर धान के पके खेतों बीच / अपनी मासूम हँसी को छोर / धुएँ के शहर में चला आया हूँ / चारों ओर मिलों की चिमनियाँ / मुँह खोले भूतों की परछाइयाँ।

– 'धुएँ के शहर में', रामकुमार गुप्त

मातृभूमि की भाँति राष्ट्र के प्रति उत्कट प्रेम के उद्‌गार और नर–नारी को जगाने का आह्वान भी इन कवियों ने किया है :

ऐसा व्रत, ऐसा लक्ष्य लिये
वे वीर धरा पर आये थे।
केवल इस हेतु उन्होंने सर
बंदी ! हँसकर कटवाये थे।

– 'भगतसिंह सर्ग', भागवतप्रसाद मिश्र 'नियाज़'

नारी जागरण आज के युग की प्रधान विशेषता है। युगो से पद–दलित नारियों को जगाने, आगे बढने और भविष्य को साकार करने का आह्वान भी इन कवियों की कविता में है :

बढ़ चलो वीरांगनाओ,
पंख पैरों में लगा लो।
हाथ में भर लो हवाएँ,
सूर्य को आँखों में भरकर
दूर, केवल दूर देखो।

– 'आसादीप', सुधा श्रीवास्तव

प्रेम की ही भाँति 'जीवन' और 'मृत्यु' चिंतन भी इन कवियों की कविता का प्रमुख विषय है। यह संसार, मानो दो दरवाजों वाला मकान है। एक से हम जीवन में पदार्पण करते हैं और दूसरे से इस संसार से विदा होते हैं। जो कवि कविता को सामयिक न समझ कर शाश्वत समझते हैं, वे आत्मचिंतन जीवन और मृत्यु के रहस्यों को अपनी कविता के माध्यम से व्यक्त करते हैं।

मन ही पथ है, मन ही रथ है, मन ही रथ की गति है।
दृश्य जगत का एक–एक कण, मन की ही अनुकृति है।

– 'अब कुछ मन करता है', किशोर काबरा

हिन्दुस्तान और पाकिस्तान की समस्या पर भी इन कवियों ने सहानुभूति पूर्वक विचार किया है :

पाकिस्तान / हमारी घृणा का पठार / वह भाई है / जिसे हम प्यार नहीं दे पाये /..... आगे न हिन्दुस्तान होगा / न रहेगा पाकिस्तान / होंगे हरे भरे खेत और हम।

–'पठार', रमाकान्त शर्मा

इन कवियों ने इन शाश्वत सत्यों को उद्घाटित करने का प्रयत्न कविता के माध्यम से किया है। जीवन क्या है और उसके चिर सत्य को कैसे प्राप्त किया जा सकता है, इसके संबंध में कवियों की कुछ उक्तियाँ द्रष्टव्य है :

जीवन का चिर सत्य सदा ही रहता है छिपकर अनजाना,

जो अनपहचानी राहों से गुजरा उसने ही पहचाना।

– 'मैं अनजान राहों का राही', द्वारकाप्रसाद साँचीहर

अंधकार से प्रकाश का / युद्ध है जीवन / धर्म से अधर्म का / सत्य से असत्य का / नीति से अनीति का / संघर्ष है जीवन।

– 'जीवन', घनश्याम अग्रवाल

जीवन और जगत में आनन्द सर्वत्र व्याप्त है जैसे कि शिशु की मुस्कान में, यौवन के हास्य में, मन्दिर में फैली चन्दन की गन्ध में, किन्तु मनुष्य अहंकारवश इन आनन्दानुभूतियों से वंचित रह जाता है।

जीवन में / निर्मल मधुर हास्य / वरदान है ईश्वर का ! / मगर अफसोस,

अहम् की मुट्ठी में / बन्द है खुशी का खजाना।

– 'खुशी का खजाना', निर्मला आसनानी

जब समस्त / सृजन क्रिया हो रही है दृष्टिहीन / तब कैसे होगी तुम्हारी कृति / दृष्टि-संपन्न, जिसे तुम / समझ रहे हो / युग बोध / वह इंगित है / पूर्वाभास है / विडंबनापूर्ण भविष्य का। – जयकिशनदास सादानी

ज़ीवन की ही भाँति मृत्यु को भी इन कवियों ने निडर होकर सहज भाव से लिया है। मृत्यु जीवन का आखरी छंद है। उससे आगे मनुष्य का भौतिक शरीर नहीं जा सकता, उसकी कविता अवश्य जा सकती है :

जब जीवन के / रास्ते हों बन्द / न रहे कहीं द्वंद / गले लगाना मुझे / बन... मेरी ज़िन्दगी का / आखरी छंद। – 'मौत', नलिनी पुरोहित

मैं तो जाऊँगा सिर्फ़ मौत तलक,
उससे आगे मेरी गज़ल जाये।

– 'गज़ल', सुल्तान अहमद

मेरी गर्दन की तरफ / मुँह बढ़ाया / फिर यकायक / रुक गया? सहमी आवाज में पूछा / कौन-सा ब्लड ग्रुप है तेरा, बता?

– ड्रेकूला, शेख आदम आबूवाला

ऐसी की तैसी हो / उस मुनादी पीटने वाली की / जो उधार के आदेशों को / दंड का लिबास पहनाकर / अपनी सुविधा के लिए / मिमियाती भेडों की ऊन ओटे जा रहा है। – 'मुनादी', बसंतकुमार परिहार

इस प्रकार हमने देखा कि गुजरात के कवियों की हिन्दी कविता बहुआयामी है। अन्य समकालीन कवियों ने जहाँ रूमानी प्रेम और प्रकृति को कविता में से निरस्त कर

दिया है। इन्होंने उसे भी साग्रह अपना कर युगीन जीवन को उसकी समग्रता में देखने का प्रयास किया है। युगीन यथार्थ और शाश्वत सत्य की जुगलबंदी गुजरात की समकालीन हिन्दी कविता की विशेषता है। इन कवियों ने एक ओर रोजमर्रा की ज़िन्दगी, कटु यथार्थ, मानवीय सरोकार, भ्रष्टाचार, आतंकवाद, राजनैतिक आपाधापी की कविता की है तो दूसरी ओर सत्य, अहिंसा, कौमी एकता, राष्ट्रीयता, विश्वबंधुत्व और विश्वशांति तक भी कवियों की कविता पहुँची है। इसी संदर्भ में यह भी उल्लेखनीय है कि जहाँ अन्य कवियों ने यथार्थ के नाम पर समकालीन कविता में भदेस, नंगे, जुगुप्सापूर्ण यौन–चित्र अपनी कविता में प्रस्तुत किए हैं, गुजरात की शालीनता ने इन कवियों को उस विकृति से बचाए रखा है।

गुजरात के कवियों की समकालीन हिन्दी कविता के कथ्य पर विचार कर चुकने के पश्चात् हम उसके शिल्प पर भी दृष्टपात करना चाहेंगे। इस कविता की सबसे बड़ी विशेषता उसकी भाषा–भंगिमा है। विभिन्न हिन्दी भाषी प्रांतों से यहाँ आकर बसे हिन्दी कवियों की भाषा एक ओर तो निज–निज क्षेत्र के वैशिष्ट्य से युक्त है दूसरी ओर वह गुजराती की गंध से अनुप्राणित है, इसलिए जहाँ तर भाषा का प्रश्न है, ये कवि पुरानी, घिसी–पिटी, भुथरी, प्रभावहीन भाषा को छोड़कर नई काव्यभाषा गढ़ने में सफल हुए हैं। भाषा की इस नई भंगिमा से कविता की अर्थवत्ता बढ़ी है।

गुजरात के समकालीन कवि भाषा के प्रति अपेक्षाकृत अधिक सजग और सावधान रहे हैं। उन्होंने काव्यभाषा को गद्यभाषा से आग्रहपूर्वक अलग रखा है। यही कारण है कि इन कवियों की कविता नीरस, गद्यात्मक होने और सपाटबयानी से बची रही है। युगीन आक्रोश को व्यक्त करने में जहाँ कवि गाली–गलोच तक उतर आए हैं, ये कवि संयत रहे हैं। इस प्रकार गुजरात के कवि, भद्रभाषी कवि हैं।

इन कवियों की कविता की दूसरी शिल्पगत विशेषता नए अप्रस्तुत विधानो, बिम्ब, प्रतीक तथा मिथकों का चित्ताकर्षक प्रयोग है। यही कारण है कि सामयिक यथार्थ से लेकर शाश्वत सत्य तक की अभिव्यक्ति उनकी कविता में सफलतापूर्वक हुई है।

इन कवियों ने जहाँ आधुनिकता को अभिव्यक्त करने वाली अछांदस शैली को अपनाया है, वहाँ छांदस कविता में दोहे, नवगीत, गजल, हाइकु आदि का भी प्रयोग किया है। कुछ ने तो लम्बी कविता, खंडकाव्य और महाकाव्य भी लिखे हैं। कुछ उदाहरण दृष्टव्य हैं :

दोहे : **तीन हाथ को चोलना, काल रह्यो झकझोर।**
तेरा तुझको सौंपते, क्या लागे है मोर।।

'दोहे', भागवतप्रसाद मिश्र

तू नन्दन वन लौट जा, ओ सुकुमार वसंत।
नागफनी का देश यह, काँटे यहाँ अनंत।।

'दोहे', भगवानदास जैन

कौन जरे यह बावरी, उठ उठ बैठी होय।
चिता तलक आशा बँधी, पिया मिलेंगे मोहि।।

सरशार बुलंद शहरी

गीत : 'जब मैं तेरे गाँव से गुजरा तो वक्त रुक–सा गया'

'गीत', भगवतशरण अग्रवाल

हमने स्वतः करों के बंधन अपनाये हैं,

हमने पुनः गीत पीड़ा के ही गाये हैं।

'हमने स्वतः करों के बंधन अपनाये हैं', भागवतप्रसाद मिश्र

गज़ल : मुहब्बत ज़िंदगी की एक कड़ी है

मगर इस राह में मुश्किल बड़ी है।

कभी होठों पै रक्साँ हैं तबस्सुम

कभी आँखों में सावन की झड़ी है।

– रहमत अमरोहवी

भेड़िये बस्तियों में सामने लगे।

फिर हिरन गाँव से दूर जाने लगे।

– 'बस्तियों में भेड़िए', विष्णु 'विराट' चतुर्वेदी

ऊपर–ऊपर बंजर मुझमें,

भीतर एक समंदर मुझमें।

– 'गज़ल', सुल्तान अहमद

घिस गया इतना कि चंदन हो गया हूँ,

झुक गया इतना कि वंदन हो गया हूँ।

– 'चंदन हो गया हूँ', किशोर काबरा

दुख मुझसे दूर हटता ही नहीं है,

एक शिशु–सा आज तक मुझसे हिला है। – 'गजल', भगवानदास जैन

शामेगम की न जाहिरात करो,

अब तो बोझिल न कायनात करो।

– 'ग़ज़ल', भागवतप्रसाद मिश्र

हाइकु : हाइकु काव्य / सत्रह शरों पर / लेटा गांगेय /

श्वेत श्रृंगों में / खिला ब्रह्म कँमल / उत्तरांचल

कपोल तिल / शोभा सरोवर में / शालिगराम

– आ. रघुनाथ भट्ट

प्यार से सेया / पंख आते ही उड़े / खाली है नीड़

बोये सपने / सींचें इन्द्रधनुष / फैले कैक्टस /

शत्रु ते कहाँ? / मित्र ही ते जिन्होंने / कीला क्रास पे।

'हाइकु', भगवतशरण अग्रवाल

गुजरात के हिन्दी–कवियों में किशोर काबरा, भागवतप्रसाद मिश्र, अम्बाशंकर नागर, विष्णु विराट, सुरेश शर्मा 'कांत', जयसिंह 'व्यथित', चंद्रपाल सिंह यादव, गोपीचन्द चौबे, राजेन्द्र 'काजल' आदि कवियों ने प्रबंध काव्यों का भी प्रणयन किया है। इनमें से कुछ काव्य महाकाव्यों की गरिमा से भी मंडित है।

किशोर काबरा के प्रबंध काव्य में 'उत्तर रामायण', 'उत्तर महाभारत', 'परिताप के पाँच क्षण', 'धनुष भंग', 'नरो वा कुंजरोवा' विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं। इसी तरह अम्बाशंकर नागर का 'प्रम्लोचा', भागवतप्रसाद मिश्र कृत 'कारा' और 'कस्मै देवाय', विष्णु विराट कृत 'निर्वसना' और 'कर्ण' भी गुजरात के हिन्दी प्रबंध काव्यों में बहुचर्चित

हैं। इनके अतिरिक्त जयसिंह 'व्यथित' कृत 'कैकेयी के राम' और 'दलितों के मसीहा', चंद्रपाल सिंह कृत 'विमाता', गोपीचन्द चौबे कृत 'हिमांगिनी', राजेन्द्र काजल कृत 'चौला देवी' भी गुजरात की प्रबंध परंपरा में उल्लेखनीय है। लम्बी कविता के प्रणयन मे कवि श्री बसंतकुमार परिहार का प्रदान उल्लेखनीय है।

विस्तार भय से इन महाकाव्यों एवं प्रबंध-काव्यों एवं कुछ अन्य कवियों के द्वारा लिखी गई लम्बी कविताओं की सोदाहरण समीक्षा यहाँ संभव नहीं हो सकती। यह एक स्वतंत्र अनुशीलन और विवेचना का विषय हो सकता है। यहाँ इतना ही कहना पर्याप्त होगा कि परंपरागत महाकाव्यों, खंडकाव्यों और 'एपिक' से भिन्न इन प्रबंध-काव्यों का प्रणयन हुआ है। पौराणिक और ऐतिहासिक कथानकों पर आधारित होते हुए भी भाषा, शैली और शिल्प की दृष्टि से इन प्रबंधकाव्यों में नवीनता है, जिसे देखकर यह विश्वास होता है कि गुजरात की प्रबंध परंपरा का भविष्य उज्जवल है।

सारांशतः विगत दो-चार दशकों में गुजरात के शताधिक कवियों की ३०० से अधिक काव्य-संग्रह प्रकाशित हुए हैं। एक हिन्दीतर प्रदेश में इतनी काव्य कृतियों का प्रकाशन परिमाण की दृष्टि से तो उत्साहवर्धक है ही, गुणवत्ता की दृष्टि से भी इन कृतियों में से कुछ ने अखिल भारतीय स्तर पर अपनी पहचान बनाई है।

कुछ विचारकों का मत है कि जिस गति से विज्ञान ने प्रगति की, उस त्वरा से कविता ने प्रगति नहीं की है। आदमी विज्ञान के सहारे चाँद तक पहुँच गया है और कविता कृत्रिमता के कारण रसातल को पहुँच गई है। इसका मूल कारण आज की कविता में छद्म कविता का प्रचलन है। समकालीन कविता के अछांदस हो जाने के कारण और काव्य-भाषा के बोलचाल की भाषा के निकट आ जाने के कारण कितने ही अकवि काव्यक्षेत्र में प्रविष्ट हो गए हैं। परिणाम स्वरूप कविता और अकविता का भेद लुप्त हो गया है। कविता

के तीन अपरिहार्य तत्व हैं, एक विचार, दूसरा बिम्ब और तीसरा लय। जहाँ इन तीनों का निर्वाह होता है, वहाँ कविता सहज रूप में प्रकट होती है। इस प्रकार की कविता को 'सहज कविता' कहा जा सकता है। ऐसी कविता छांदस और अछांदस दोनो प्रकार की हो सकती है। कविता के इसी युगीन स्वरूप की ओर गुजरात के अधिकांश समकालीन कवि बढ़ते दिखाई दे रहे हैं।

गुजरात के शताधिक कवियों में से कुछ कवियों के उदाहरण हमने इस लेख में दिये हैं। इनके अतिरिक्त सर्वश्री रमेश शर्मा 'चन्द्र', पारुकांत देसाई, शिवा कनाटे, कैलाशनाथ तिवारी, कुंदन माली, फूलचन्द गुप्त, नवनीत ठक्कर, लक्ष्मण दुबे, प्रमोद कृष्ण, प्रमोदसंकर मिश्र, अश्विनी कुमार पांडेय, ऋषिपाल धीमान, दीनबंधु द्विवेदी, विजयकुमार तिवारी, हरिप्रसाद शुक्ल, पदम सिंघी, माणिक मृगेश, शिवा कनाटे, सुरेश शर्मा 'कांत' आदि भी अच्छे कवि है। विस्तार–भय से हम इनके उदाहरण नहीं दे रहे हैं। सुधी पाठक इनकी रचनाओं का स्वयं अवलोकन करेंगे। कवयित्रियों में रंजना अरगड़े, शशि अरोरा, कमलेश सिंह, कृष्णा गोस्वामी, मंजु घटनागर, संध्या अग्रवाल, शांति सेठ, मालती दुबे, क्रांति येवतीकर, उत्तरा, प्रमिला शुक्ल, संतोष लंगर, मीरां रामनिवास आदि भी उल्लेखनीय हैं।

अंत में इतना कहना ही शेष रहता है कि गुजरात की समकालीन हिन्दी कविता, हिन्दी कविता की मुख्यधारा के समानान्तर चल रही है। प्रादेशिक वैशिष्ट्य उसमें अवश्य है, जो इस कविता को चित्ताकर्षक और पठनीय बनाता है। कुछ लोग कहते हैं, गुजरात के कवियों की हिन्दी कविता दिल्ली और उत्तर प्रदेश के कवियों की कविता के समान स्तरीय नहीं है। ऐसे लोगों से मेरा निवेदन है कि प्रसाद, निराला, निदकर, अज्ञेय और

नरेश मेहता तो हिन्दीभाषी प्रदेश में भी एक–एक ही हुए है। यहाँ वे कैसे हो सकते हैं? वैसे यहाँ के कवि भी किसी से कमतर नहीं है। गुजरात के फख्र साहब ने तो कहा भी है :

अय फ़ख्र हर कमाल है कोशिश पै मुनहसिर।

दिल्ली में जो रहे, वही अहले जुबाँ नहीं।[५६]

गुजरात की हिन्दी की साठोत्तर कविता में प्रस्तुति और कथ्य के आयाम लगातार परिवर्तित होते रहे हैं। इसका प्रमुख कारण है यहाँ के रचनाकारों के वैचारिक वैभिन्य धरातल। गुजरात में मुख्य रूप से दो प्रकार के रचनाकार है – एक तो वे जो हिन्दी भाषी क्षेत्रों से यहाँ आकर बसे हैं, जिनकी मातृभाषा हिन्दी है और दूसरे वे हैं जिनकी मातृभाषा हिन्दीतर गुजराती या मराठी है, जो मूलरूप से गुजरात के ही वासिंदे हैं। इस प्रकार गुजरात के मूल निवासियों और हिन्दी क्षेत्रों से संस्थापित हुए रचनाकारों के कथ्य एवं प्रस्तुतिकरण में भी प्रवृत्तिगत अंतराल स्पष्ट आभासित होता है।

यही कारण है कि गुजरातेर क्षेत्र के हिन्दी साहित्य में तथा गुजरात के हिन्दी साहित्य में प्रवृत्तिगत अन्तर है। गुजरात का आधुनिक हिन्दी साहित्य अपनी विशिष्ट पहचान के सवाल से सदैव जूझता रहा है। डॉ. आलोक गुप्ता का मंतव्य दृष्टव्य है –

आधुनिक काल में हिन्दी साहित्य अधिकतर ऐसे लोगों द्वारा लिखा गया है जो रोटी–रोजी की तलाश में उत्तर भारत के दूर–सदूर गाँवों से अहमदाबाद, सूरत जैसे महानगरों में बस गए। गाँधीजी ने हिन्दी को राष्ट्रभाषा का सम्मान दिया और इसके प्रचार–प्रसार के लिए प्रचार समितियों का गठन किया लेकिन जहॉ तक गुजरात में हिन्दी साहित्य के सर्जन का प्रश्न है, अधिकतर उन्हीं लोगों ने हिन्दी को अपनी संवेदनाओं को व्यक्त करने का माध्यम बनाया जो उत्तर भारत से आए थे। गाँधीयुग में लिखा गया हिन्दी

साहित्य अभी प्रकाश में नहीं आया है। जो स्फुलिंग दिखाई देते हैं वे स्वतंत्रता के बाद के हैं।

अहमदाबाद से 'चेतना' पत्रिका का प्रकाशन (१९५८) एक महत्वपूर्ण घटना है जिसमें उन १४ संभावनाशील कवियों की कविताएँ संकलित कीं गयीं, जो जन्मभूमि से विस्थापित होकर महानगर की चकाचौंध में अपने को अजनबी और अकेला महसूस कर रहे थे। प्रश्न भाषा का ही नहीं, दो समाजों का भी था, जिनमें बडा अन्तर था। ये रचनाकार एक ओर विस्थापन की पीड़ा से ग्रस्त थे, दूसरी ओर, इस नई दुनिया को समझने का प्रयत्न कर रहे थे। 'आउट साइडर' होने की विवशता उस समय की रचनाओं में देखी जा सकती है। रमाकांत शर्मा की इन पंक्तियों में जिस आशंका, असुरक्षा और निराशा का भाव है, वह बहुत कुछ तत्कालीन परिवेश की देन है –

मैं समय–शापित फूल अंधकार का,
अपने प्रकाश को ढूँढ़ रहा,
सोयी आँखों में,
जो पी–पीकर बेसुधी सोयी हैं।
द्वार–द्वार खोल रहा
गंध–सने हाथों से,
चोट–पर–चोट अनगिनत चोटें,
पंखुरियाँ बिखर रहीं,
कहीं इनके जगने से पहले ही
डाल मुझे छोड़ न दे।[५७]

गुजरात में बसे हिन्दी भाषियों के अनुभव और मानसिकता को समझने के लिए इस दौर की कविता से बहुत कुछ सामग्री मिल सकती है गुजरात की हिन्दी कविता का यह उन्मेष हिन्दी प्रदेश की काव्यधारा से अलग है। शायद इसी कारण इसका महत्व भी है।

इस दौर के बाद जैसे-जैसे गुजरात में हिन्दी के अध्ययन-अध्यापन का विकास होता गया, वैसे-वैसे विभिन्न विधाओं में रचना होने लगी। वर्तमान परिदृश्य को देखें तो गुजरात में हिन्दी रचनाकारों की तीन श्रेणियाँ मिलती हैं। पहली श्रेणी ऐसे रचनाकारों की है जिनका जन्म तो उत्तर भारत में हुआ है लेकिन आजीविका के कारण वे गुजरात में बस गए हैं। दूसरी श्रेणी उन रचनाकारों की है जो केन्द्र सरकार के कार्यालयों एवं बैंकों में नौकरी के कारण गुजरात में रहे और साहित्य सृजन करते रहे और तीसरे वे रचनाकार हैं जिनकी मातृभाषा गुजराती है लेकिन उन्होंने हिन्दी में लिखा है। इन तीनों श्रेणियों के रचनाकार साहित्य सर्जन कर रहे हैं और पिछले दो दशकों में विपुल साहित्य लिखा गया है।

प्रश्न यह है कि रचनात्मक प्रवृत्ति को स्वांतः सुखाय मानें तो क्या उसके मूल्यांकन की कसौटी की आवश्यकता नहीं है? क्या यह स्वांतः सुखाय प्रवृत्ति इतनी निरामिष है कि अपने समय के सरोकारों और परिवेश से इसे कोई निस्बत नहीं है? यदि ऐसा नहीं है तो फिर गुजरात में लिखे जा रहे हिन्दी साहित्य को आरक्षण का लाभ देना चाहिए? या फिर उसे विपुल हिन्दी साहित्य का अंग माना जाए जो पाँच-छः राज्यों के साझा मंच से सर्जित हो रहा है? हम जानते हैं कि साहित्य के मूल्यांकन के प्रतिमान वैश्विक होते हैं। इस परिप्रेक्ष्य में एक खतरा यह है कि गुजरात के स्वातंत्र्योत्तर हिन्दी साहित्य पर हिन्दी साहित्य की कालबद्ध प्रवृत्तियों और आन्दोलनों का सीधा प्रभाव पड़ा।

यहाँ के हिन्दी साहित्य का बड़ा हिस्सा रोमानी प्रवृत्तिवाला है। इसके अतिरिक्त अनेक ऐसे युवा रचनाकार है जो हिन्दी की समकालीन रचनाशीलता से जुडे हुए हैं और हिन्दी भाषी प्रांतों की प्रतिष्ठित पत्रिकाओं में प्रकाशित हो रहे है। उनकी रचनाओं में वही प्रश्न प्रधान रहे हैं जिन्हें साहित्य में अभी महत्व दिया जा रहा है। इस तरह वे गुजरात में रहकर भी संवेदना के धरातल पर गुजरात का अतिक्रमण करते हैं। साहित्य के क्षेत्र में तो इसे विशेषता ही माना जाएगा। फिर भी, इस प्रश्न से तो टकराना पड़ेगा कि इसके आगे 'गुजरात' विशेषण लगाने की क्यों आवश्यकता है। यहाँ पर्याप्त मात्रा में ऐसा साहित्य लिखा गया है और लिखा जा रहा है, जिसमें न अपने समय की आहट है, न संघर्ष की। दूसरी ओर, मुख्यधारा से जुड़ने की ललक में उसके प्रभाव में रचनाएँ लिखी जा रही हैं, और प्रकाशित हो रही हैं। एक ओर प्रभावहीन आत्ममुग्ध लेखन है तो, दूसरी ओर, अपने परिवेश, समस्याओं और विडम्बनाओं की उपेक्षा करते हुए प्रचलित विषयों पर रचनाएँ की जा रही हैं, प्रश्न प्रभाव में या प्रभाव के बिना की गई रचना में चुनाव या उसकी श्रेष्ठता सिद्ध करने का नहीं है। प्रश्न यह है कि क्या गुजरात के इस हिन्दी साहित्य की कोई अलग पहचान है या हो सकती है? क्या इसके बारे में कहा जा सकता है कि यह साहित्य गुजरात की भूमि पर ही रचा जा सकता है, अन्यत्र नहीं? यदि इस कसौटी पर नहीं परख सकते तो 'गुजरात' विशेषण लगाने का औचित्य क्या है? अगर हम 'गुजरात' विशेषण लगाकर गुजरात में लिखे जा रहे हिन्दी साहित्य तक ही अर्थ को सीमित करना चाहते हैं तो इतिहास में नाम दर्ज हो सकता है जबकि साहित्य का महत्व उसकी जीवंतता से होता है। हम यह संतोष अवश्य कर सकते हैं कि गुजरात में हिन्दी साहित्य का वृक्ष पल्लवित–पुष्पित होता जा रहा है। लेकिन इस बारे में गंभीरता से सोचने की आवश्यकता है कि 'गुजरात' विशेषण का क्या वैशिष्ट्य हो सकता है। ऐसा क्या है जो गुजरात में रह रहे हिन्दी प्रदेश के रचनाकार से अलग करता है? गुजरात के हिन्दी रचनाकार के जीवन–

अनुभव, संघर्ष, द्वन्द्व, तनाव, आत्मसंघर्ष हिन्दी प्रांत के रचनाकार से निश्चित रूप से अलग होंगे। यही वह धरातल है, जहाँ गुजरात का हिन्दी रचनाकार अपने वैशिष्ट्य को प्रमाणित कर सकता है, उसकी रचनाशीलता पर परिवेश किस प्रकार का दबाव डालता है। उसकी अनुभूति के रूप में इससे क्या परिवर्तन आया है, वह स्थान है जहाँ कुछ विशेष की संभावना है।

ऐसा नहीं है कि गुजरात के हिन्दी रचनाकारों के साहित्य में ऐसे संकेत नहीं मिलते। अपने समय और संघर्षों की अनुगूंज यहाँ है, परन्तु इस ओर सजग होने की आवश्यकता है। गुजरात में रचनारत सभी पीढ़ियों के रचनाकारों में इसके संकेत मिलते हैं। उदाहरण के लिए रामदरश मिश्र के 'दूसरा घर' उपन्यास का ज़िक्र करना चाहूँगा। यह उपन्यास लिखा ही नहीं जा सकता था, यदि मिश्रजी गुजरात में नहीं रहे होते। विस्थापन का दर्द, अकेले होने की पीड़ा, असुरक्षा जैसी स्थितियों को लेकर गुजरात के रचनाकारों ने जब लिखा है, उसमें इस प्रकार की सच्चाई प्रकट हुई है। रामकुमार गुप्त की इन पंक्तियों में ज़िंदगी को 'खानबदोश का घर' और 'रेल के डाक डिब्बे' सा उपमित किया गया है। विस्थापन और अकेलेपन का दर्द यहाँ मुखरित हुआ है –

'एक जिंदगी भी क्या है?
एक खानाबदोश का घर
आज यहाँ है, कल कहीं पर
एक लिफाफे–सी जान को
ढोता रहा– दिन भर
रेल के डाक डिब्बे में।'[५८]

यह भी एक तथ्य है कि विस्थापन का दर्द, अकेले होनो की वेदना और असुरक्षा जैसी अनुभूतियों की सघन अभिव्यक्ति उन कवियों में अधिक हुई है जिन्होंने स्वतंत्रता के बाद दशक मे गुजरात की, हिन्दी कविता के क्षेत्र में प्रवेश किया। रमाकांत शर्मा, भगवतशरण अग्रवाल, गोवर्द्धन शर्मा, अम्बाशंकर नागर, किशोर काबरा, रामकुमार यादव, रामकुमार गुप्त आदि ने लगभग छठवें दशक में कविता के क्षेत्र में प्रवेश किया था। यह वह पीढ़ी है जिसने एक साथ ऐसे अनुभवों को अभिव्यक्ति दी जिनसे यहाँ का हिन्दी भाषी समाज दो–चार हो रहा था। यह ऐसा महत्वपूर्ण समय था जब रचनाकार अस्तित्व के संघर्ष के साथ–साथ स्वप्नों को ध्वस्त होते देख रहा था। जहाँ आस्था का स्वर है वह उनके जुझारूपन के कारण है। वस्तुतः इस पीढ़ी के अधिकांश कवियों में एक निराशा का स्वर है, लेकिन यह निराशा बैठे–ठाले की निराशा नहीं है। अब नयी कविता का बड़ा हिस्सा आयातित भावों और संवेदनाओं से भरपूर है। ऐसे में गुजरात के ये कवि अस्तित्व की लड़ाई लड़ते हुए, टूटते हुए भी अपनी पहचान बनाने और बचाने के लिए प्रयास कर रहे थे। ये रचनाकार नई अनुभूतियों को रचनात्मक अभिव्यक्ति देने में भले ही उतनी दक्षता न रखते हों लेकिन उनकी कविता में अनुभव की सच्चाई स्पष्ट परिलक्षित होती है। इस संदर्भ में डॉ. भगवतशरण अग्रवाल द्वारा संपादित 'नव–द्वीप' और 'उगते–सूरज' में संकलित तत्कालीन युवा कवियों की कविताओं को देखा जा सकता है। कुछ उदाहरण प्रस्तुत हैं –

'लौटती भीड़ में खोया / अकेला मैं / झुका हुआ यादों की रेलिंग पर /
सोचता हूँ ...... / क्या मैं भी – / धूल भरी चादर की तरह /
झटक दूँ थकान अपनी देह की / ताजा होकर लौट जाऊँ /
लिये हुये अपना सुख और दुख / पर कहाँ? / किसके लिए? /

कौन बैठा है मेरी प्रतीक्षा में।'[५९]

'तवे सी धधकती / जिन्दगी में / जिजीविषाओं का / पानी की

बूँदों की तरह / छन–छनकर वाष्प में बदल जाना / और आस–पास

की हवा में / धुंध की तरह लटक जाना / उस धुंध के पार .... /

मेरा बार ..... बार ..... झाँकना ....

ये सबके सब / अधिकाधिक हास्यास्पद होते हुए भी।

जीवन की चरम–निर्यात / हो गये हैं।'[६०]

'नन्हे से कमरे में / घिरी छटपटाती / नन्ही–सी जिन्दगी / बन्द

सारी खिड़कियाँ और सारे गोखले / रोशनी से रोशनी तक /

कार्पोरेशन के नल के / व्यर्थ बहते पानी–सी / दूसरों की धूप में से /

खुरच–खुरच कर रोशनी को बाँधता हूँ। उस नन्हे से कमरे में

तब तक अँधेरा, विभ्रान्त अजगर–सा / सब कुछ ग्रस लेता है।'[६१]

जले हुए कोयले की राख–सा दिन

एक ज्वलन्त क्षण के लिए

बार–बार कुरेदता हूँ

जीवन में संपूर्ण अविश्वास के साथ।

अपने चारों ओर की भीड़ में

अपने को जीवित रखने के प्रयत्न में

किसी परिचित चेहरे की तलाश करता हूँ।[६२]

गुजरात में लिखी जा रही हिन्दी कविता में ऐसी कविताओं की संख्या कम नहीं है। उस पीढी की संवेदनाएँ बहुत कुछ उस स्थिति से टकरा रही थीं, परन्तु बीसवीं शताब्दी के अन्त तक आते आते वे और सघन हो गई हैं। अब कविता में पुरानी लालसा के स्थान पर परिस्थितियों को जानने-समझने और अपनी क्रियाशीलता के प्रभाव का विवेक भी प्रकट हुआ है। एक तरह से अधिक सजगता से युवा कवि रचनां कर रहे हैं। उदाहरण के लिए सुलतान अहमद की कविता की पृष्ठभूमि में अहमदाबाद के दंगे हैं। वस्तु स्थिति के ज्ञान के साथ असुरक्षा एवं अजनबीपन की सघन अभिव्यक्ति उनकी ग़ज़लों एवं कविताओं में हुई –

'शहर की अजनबी गलियों से होकर घर जो आता हूँ,

कभी खुद को, कभी आँगन को पाता हूँ मैं दीवाना।'

पुरानी पीढ़ी के पास कम से कम कुछ विकल्प थे। पूरी तरह न सही, पर मन में अपने सपने के गाँव में लौटने की चाह थी। नई पीढ़ी के पास ऐसा साबुत विकल्प नहीं रहा और न वह इस 'युटोपिया' में जी रही है। फूलचंद गुप्ता की इन पंक्तियों में विस्थापन की पीड़ा से उत्पन्न रोष है और शहर की हृदयहीनता पर आक्रोश प्रकट हुआ है –

तेरे चुंगल से

छूट पाना मुश्किल है

अब तो यह देह यहीं राख हो जाए शायद

पर हे हत्यारे शहर !

मैं भी अब

तेरा ही खाऊँगा

तेरा ही पीऊँगा

तेरी ही छाती पर बैठकर जीऊँगा

और अपनी इन वफादार इन्द्रियों से

देखूँगा अपना गाँव / सुनूँगा अपना गाँव / बोलूँगा अपना गाँव।

– अपना गाँव

द्वारकाप्रसाद साँचीहर की कविता में अपने समय की अभिव्यक्ति एक विवशता बोध के साथ होती है। कुछ नहीं कर पाने की विवशता एक ओर परिस्थितियों की भयावहता का संकेत करती है तो दूसरी ओर, अपनी स्थिति और प्रभावशीलता के बारे में असमंजस का भाव, पूरे वातावरण की भयावहता को द्विगुणित कर देता है –

कुछ कह सकता

तो हवा में मुक्के क्यों मारता

कलाइयाँ क्यों काटता

दाँत क्यों भींचता

मैं अवाक के चाक पर

गीली–मिट्टी सा घूमता हूँ

रीते घड़े–सा उतरता हूँ

सोचता हूँ

कि बवंडर उठेगा

तो मुठ्ठियों में भरूँगा, पर कब

'कब' का प्रश्न होठों पर आकर तुतला जाता है

फिर लगता है ......[६३]

यह सच है कि कविता में निरूपित भाव के साथ स्थानीयता का सीधे-सीधे संबंध ज़ोड़ना सरलीकरण का खतरा मोल लेना है, परन्तु गुजरात के रचनाकारों में इस तरह की अनुभूतियों की कमी नहीं है। लेकिन कथा साहित्य में कथाभूमि के बिना काम नहीं चल सकता। अपनी स्थानीयता और पात्रों के माध्यम से कथाकार अपने रचनात्मक अनुभव तक पहुँचता है। गुजरात के वैशिष्ट्य के संदर्भ में इस समय श्रीराम त्रिपाठी की 'कामरेड' आर. बी. यादव और हरियशराय की 'बर्फ होती नदी' कहानियाँ याद आ रही हैं जिनमें गुजरात अनुभव की कलात्मक अभिव्यक्ति हुई है।

इस अनुभव की कुछ दूसरे प्रकार से भी अभिव्यक्ति हुई है। उसे अधिक प्रामाणिक बनाने के लिए गुजराती शब्दावली और वाक्य-विन्यास का उपयोग किया गया है। शैलेष पंडित का 'बंधु विरादर' उपन्यास गुजरात के गाँव जीवन पर आधारित है। उपन्यास में पात्रों की विशिष्टता दर्शाने के लिए संवादों में गुजराती मिश्रित हिन्दी या गुजराती वाक्यों का प्रयोग किया होता तो माना जा सकता था कि पात्र के वैशिष्ट्य के लिए इसकी आवश्यकता थी। परन्तु 'नैरेटर' के वर्णनों में भी गुजराती वाक्यों एवं शब्दों का प्रयोग किया गया है। ऐसी विशिष्टता उपन्यास की सीमा भी बन जाती है, उस ओर ध्यान देने की आवश्यकता है।[६४]

गुजरात के साठोत्तर हिन्दी कवियों में जिस प्रकार कथ्य और प्रस्तुति का वैविध्य है उसी प्रकार उनके सृजन में वैचारिक मंतव्यों एवं शैलीगत संरचनात्मक वृत्तियों का भी अंतराल है। गुजरात के साठोत्तर कवियों में भागवत प्रसाद 'नियाज', अम्बाशंकर नागर,

रमाकांत शर्मा, भगवतशरण अग्रवाल, किशोर काबरा, रामकुमार गुप्त, दयाशंकर जैन, बसंतकुमार परिहार, अविनाश श्रीवास्तव, जयसिंह 'व्यथित', भगवानदास जैन, घनश्याम अग्रवाल, कमल पुंजाणी, विष्णु विराट, द्वारकाप्रसाद साँचीहर, सुलतान अहमद, प्रमोदशंकर मिश्र, भगवतीसिंह नागदंत्त, जिलेदार सिंह, भँवरलाल गुर्जर, सदाशिव कौतुक, जादवजी पटेल, मस्तराम गहलोत, ईश्वरसिंह चौहान, रामचेत वर्मा, विजयकुमार तिवारी, हरिप्रसाद शुक्ल, अश्विनीकुमार, शैलेश पंडित, फूलचंद गुप्त, आलोक गुप्त, रघुनाथ भट्ट, नलिनी पुरोहित, सुधा श्रीवास्तव, प्रणव भारती, अंजना संधीर, रंजना अरगडे, निर्मला आसनानी, प्रतिभा पुरोहित, कृष्णा गोस्वामी और पुष्पा शर्मा आदि के नाम विशेष उल्लेखनीय हैं।

कवियों की यह नामावलि और बढ़ाई जा सकती है और सार्थक ढंग से बढ़ाई जा सकती है। लेकिन हम यह नहीं करेंगे। हम केवल इस तथ्य की ओर निर्देश करना चाहते हैं कि गुजरात में काव्य–सृजन की यह विपुलता हमें अनेक स्तरों पर आश्वस्त करती है। काव्य–सृजन किसी भी समाज की प्रबुद्ध सांस्कृतिक चेतना का परिचायक तो है ही, इसमें यह संकेत भी समाहित है कि गुजरात की समकालीन कविता में जीवनानुभवों का वैविध्य है। इसमें प्रबुद्ध सामाजिक चेतना के साथ व्यक्ति जीवन के आत्मीय और एकांतिक अनुभवों की भी अभिव्यक्ति हुई है। एक ओर इसमें मानव अस्तित्व को टिके रखने का संघर्ष है तो दूसरी ओर अस्तित्व की सार्थकता की तलाश भी। अधिकांश कवियों ने अनेक विषम स्थितियों के बीच से गुजरते हुए समाज में अपने लिए सम्माननीय स्थान बनाया है। उनके अपने जीवन के इन संघर्षों की यह अनुगूँज उनकी कविता में भी सुनाई देती है।

लेकिन यह वैयक्तिक संघर्ष कवि का अकेले का न रहकर तमाम समान धर्मों के लोगों के संघर्ष का पर्याय बन जाता है और उसमे युग-संघर्ष की अनुगूँज सुनाई देने लगती है। यदि भँवरलाल गुर्जर के काव्य-संग्रह के शीर्षक के शब्दों को उधार लेकर कहें तो अधिकांश कवियों की काव्य-यात्रा 'पथरीली ज़मीन' पर नंगे पाँव चलने की संवेदना का अहसास जगाती है। यहाँ पर यह स्पष्ट कर देना भी जरूरी है कि कवि ने इन विषम अनुभवों की अभिव्यक्ति कवि की वैयक्तिक चेतना के संस्पर्श के साथ हुई है। इसी कारण कवि की वैयक्तिकता सामूहिक अनुभव की अमूर्त्तता और निर्वैयक्तिता में खो नहीं जाती अपितु अपनी अलग पहचान बनाती है। अनुभव और अभिव्यक्ति की वैयक्तिता सृजनशीलता की अनिवार्य शर्त है जिसका गुजरात के समकालीन हिन्दी कवि ने निर्वाह किया है। इस सिलसिले में कवियों की रचनाशीलता पर बात की जा सकती है।

रमाकांत शर्मा के लिए कवि होना आदमी होने से भिन्न नहीं है। उनके लेख 'आदमी आदमी होना' अपने आप में एक बड़ा दायित्व है। .... **'मैं एक आदमी हूँ / सबके आँसुओं, मुस्कुराहटों को / ढोते सही जगह पहुँचने की / जिम्मेदारी मेरी है।'** वे जानते हैं कि मनुष्य होने का दायित्व एक नैतिक दायित्व है लेकिन मनुष्य में बहुत कुछ ऐसा भी है जो उसकी शक्ति न होकर उसकी सीमा है। उस सीमा की पहचान में ही नहीं कविता के अंकुर आकर ग्रङण करते हैं। यह दृश्य भी दृश्य भी रमाकांत शर्मा की दृष्टि से ओझिल नहीं होता, जब वे कहते हैं – **'हमारी थकी आँखों में / सूरज डूबने लगा है / महकते प्रकाश की जगह / अँधेरा छाने लगा / आकाश धीरे-धीरे / घुलता जा रहा है आकाश में।'**

अम्बाशंकर नागर का युग-बोध उस काल-संक्रमण के अन्तर्विरोधों के बीच संक्रमण करता है जिसमें आधुनिकता अपनी संवेदनहीनता की मरुभूमि का विस्तार कर

रही है, जहाँ जीवन के नाम पर जो कुछ आकार ग्रहण कर रहा है, वह नागफनी जैसी कँटीली वनस्पतियों की अंतहीन व्याप्ति है। लेनिक इस आधुनिकता के जीवन के सहज सौदर्य तथा आत्मीय संबंधों की दृष्टि को एकांतिक रूप से उन्मूलित नहीं कर दिया। जीवन में अभी भी सुगंध की लहर की अनुभूतियों का ग्रहम करने में समक्ष है। लेकिन इसके बावजूद कवि अनुभव करता है कि समय अपनी प्रतिकूलता की छाप छोड़े बिना नहीं रहता, और उसके सामने वह अपने आपको एकदम असमर्थ पाता है – **'जानता हूँ / कहीं कोई अंग / उधड़ा रह गया है / और वह सर्द पड़ता जा रहा हैः / ढँक नहीं पाता जिसे मैं।'**

भगवतशरण अग्रवाल की कविता एक बौद्धिक रूप से जागरूक व्यक्ति की संवेदनशीलता से जन्म लेती है। उनमें भावुकता है, लेकिन वे उसमें बह नहीं जाते। यही कारण है कि वे जिस भाषा में वे अपनी आत्माभिव्यक्ति करते हैं उसके इतिहास को, या उसके साथ जुड़े अर्थ–अनुषंगों को जान लेना जरूरी समझते हैं – **'चूल्हे के धुएँ से काले हो माँ की आँखों से टपकते शब्द। कुंडी खटखटाते भीख मांगते शब्द। धर्मस्थान पर पंडे बन मूर्ख बनाते शब्द।' संवेदनात्मक अन्वेषणशीलता भगवतशरण अग्रवाल की कविता का केन्द्रीय तत्व है।**

अविनाश श्रीवास्तव में भावनाओं की तीव्र आवेगशीलता है जिसमें वे आत्मालोचन के स्तर पर अपने आपको पहचानने का प्रयत्न करते हैं। जयसिंह व्यथित की कविता इतिहास और पुराण के पात्रों के जीवन में अंतर्निहित आदर्शों को पहचानने और उन्हें जन–जीवन तक पहुँचाने की एक कारगर कोशिश है। रामकुमार गुप्त की कविता में औद्योगिक युग के उस मनुष्य की त्रासदी का इतिहास जो नए आकाश की अनंतता में पंख फैलाकर देखता है वह मेघ मालाएँ न होकर धुएँ का धुंधलका और घुटन है।

'साँचीहर' में अपनी रचनाशीलता के प्रति गहरी आत्म सजगता है। वह चाहे दायित्व बोध हो, या मानवीय प्रतिबद्धता उसकी कविता में आएगा तो कविता की शर्तों पर आएगा। उनके आत्म साक्षात्कार में अमूर्तिकरण की महती भूमिका है। बसंतकुमार परिहार की कविता में सामाजिक सजगता के उसके पास आज भी असंगतियों और अंतर्विरोधों के अनुभूत तथ्य होते हैं, लोगों के वास्तविक इरादों की तह तक पहुँचने की पारदर्शी दृष्टि होती है, व्यवस्था के चीर दरवाजों के बावजूद पहचान होती है, लेकिन सबसे बड़ी बात यह है कि उनके पास इन सबका अपनी कविता में उपयोग करने का एक रचनात्मक सलीका है। वे मानवीय प्रतिबद्धता के कवि हैं।

गुजरात का कवि अपनी मिट्‌टी से जुड़ा हुआ कवि है। यही कारण कि उसमें अपने परिवेश के प्रति गहरी आत्म सजगता है। उनके परिवेश की हर हलचल उसके विचार और संवेदन को आंदोलित किए बिना नहीं रहती। यही कारण है कि गुजरात में साम्प्रदायिकता की दावानल की आग ने उसके अंगों को भी झुलसाया है। भगवानदास जैन ने साम्प्रदायिकता का जहर फैलाने वाले मानव हत्यारों से सवाल किया –

मौत के सौदागरों मैं पूछता हूँ कब़ तलक
यूँ चलेगा रक्त का व्यापार पर उत्तर नहीं।

सुल्तान अहमद ने इस दहशत भरे षड्‌यंत्र के बाहरी और भीतरी प्रभावों का जो वर्णन किया है, उसमें व्यक्त होनेवाली कसक ह्रदय को गहरे तक छूती है –

इनको हम लेके भटकते हैं सिरों पर अपने
कितने बेजोड़ हैं किस्मत के लिखे घर अपने।

इनकी लंबी कविता 'दीवार के इधर–उधर' में साम्प्रदायिकता की समस्या को व्यापक, सामाजिक, राजनीतिक फलक पर उठाया गया है। इसमें इनकी संवेदना के साथ दूसरी सोच भी शामिल है। सुल्तान जैसे मार्क्सवादी सोच के कवि के लिए इस त्रासदी की जडें वर्गीय विषमता में हैं। इस सिलसिले में फूलचंद गुप्त की कविता 'हे राम!' को भी नहीं भुलाया जा सकता है। जिसमें कवि ने बताया है कि साम्प्रदायिकता मात्र मनुष्य की ही नहीं बल्कि मनुष्यता की मानवमूल्यों की भी शत्रु है। मूल्यों के विनाश में सांस्कृतिक चेतना के विनाश के बीज होते हैं। अपनी सांस्कृतिक जड़ों से कट जानेवाले आदमी और पशु में अंतर ही क्या रह जाएगा?

कच्छ के भूकंप के हादसे को गुजरात कभी नहीं भूल सकता। इस त्रासदी की पीड़ा को आलोक गुप्त ने अपनी एक कविता 'खंडहरों का शहर नहीं है भचाऊ' (वागर्थ, अंक ७३) में अंकित किया है। वस्तुतः इस कविता में गुजरात की पीड़ा के साथ गुजरात की उस अपराजेय जिजीविषा के भी दर्शन होते हैं, जिसका परिचय गुजरात ने हर संकट का सामना करते हुए दिया है। देखें एक शब्द चित्र – कच्छ की जीवन–चेतना का –
'खंडहरों पर बाँध ली गई हैं झुग्गियाँ? पत्थर पर तकिया लगाकर लेटा है कच्छी भांडु!'

किशोर काबरा की रचनाशीलता का श्रेष्ठतम अंश उनकी प्रबंध रचनाओं में प्रकट हुआ है। अपनी संवेदना और अनुभव की अभिव्यक्ति के लिए उन्होंने मिथ कथाओं का आधार ग्रहण किया है। वस्तुतः मिथ कथाओं का अपना एक स्वायत्त संसार होता है। उसमें जातीय जीवन की मूल्यवान स्मृतियाँ संचित होती हैं। इनके बीच ही रचनाकार अपनी निजी सोच और संवेदना का प्रत्यारोपण करता है। किशोर काबरा ने भी पुराण कथाओं का अपने संवेदनात्मक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए उपयोग किया है। उनकी दो प्रबध रचनाओं 'उत्तर महाभारत' और 'उत्तर रामायण' में कवि ने महानायकों की कथा

का वर्णन किया है। लेकिन 'उत्तर महाभारत' के पाण्डव अपना आत्म-विश्लेषण करते हुए अपने जीवन की आंतरिक रिक्तता का दर्शन कराते हैं। 'उत्तर रामायण' के राम के प्रति कवि में विशेष सहानुभूति है, लेकिन वह सीता-निष्कासन का कोई औचित्य नहीं खोज पाता। सीता के समक्ष लक्ष्मण अपनी जिस विडंबना की ओर संकेत करते हैं, वह जितनी मार्मिक है, उतनी ही उत्तेजनापूर्ण –

बड़ा परतंत्र हूँ भाभी, किसी का मंत्र हूँ भाभी

अयोध्या के प्रदूषित तंत्र का षड्यंत्र हूँ भाभी।

वस्तुतः पांडवों या लक्ष्मण के जीवन का यह विघटन बहुत कुछ कवि के अपने युग के व्यापक विघटन का संकेत देता है।

गुजरात के कवियों में 'हाइकु' एक लोकप्रिय विधा रही है। विचार और रचना के स्तर पर इसे लोकप्रिय बनाने में भगवतशरण अग्रवाल की भूमिका सर्वाधिक महत्वपूर्ण रही है। अपनी हाइकु लेखन को लगभग एक आंदोलन का रूप दे दिया है। यदि 'हाइकु' जैसी लघु विधा के माध्यम से रचनात्मक शब्द की अर्थवत्ता की तलाश की जा सकती है, तो हाइकु-लेखन का स्वागत किया जाना चाहिए। अपने हाइकू संग्रह 'अर्घ्य' की भूमिका में वे लिखते हैं – 'हाइकु' द्वारा तो केवल एक-दो संकेतों या बिम्बों के माध्यम से किसी एक दृश्य रेखा के सौंदर्य या किसी विशेष मनोभाव को उभारना भर होता है। रघुनाथ भट्ट ने 'हाइकु' के विदेशीपन को अधिक अहमियत नहीं दी। वे संस्कृत की सूत्र शैली को अपनी संक्षिप्तता में बेजोड़ मानते हैं। इसे एक संयोग ही कहा जाएगा कि दोनों कवियों के हाइकु संवेदनाशीलता और अर्थगत चमत्कृति से दीप्त हो उठे हैं। भगवतशरण अग्रवाल में जीवनानुभवों के दर्शनिकीकरण सहज प्रवृत्ति है।

(१) जीवन जिया
सागर पर लिखे
महाकाव्य–सा।

(२) खींचता रहा
जल में रेखाएं
टिकतीं कैसे?

आचार्य रघुनाथ भट्ट की कल्पना व्यष्टि और समष्टि के अनुभवों के बीच सेतु रच लेने में समक्ष है। हाइकु के कुल उदाहरणों के माध्यम से हम अपनी बात स्पष्ट करना चाहेंगे।

(१) दीपक की लौ
खड़ी अंधकार में है
ध्रुवतारे–सी।

(२) आकाश फैला
सागर लहराया
धरा सिमटी।

ध्रुवतारा सबसे अलग है, सबसे विशिष्ट, कहें व्यष्टि मानस जैसी अद्वितीय। अज्ञेय ने अकेला दीप कहकर व्यक्ति की अद्वितीयता के बारे में जो बात कही, उसे आचार्य रघुनाथ भट्ट ने ध्रुवतारे के साथ जोड़कर उसकी अद्वितीयता को और भी अधिक विशिष्ट बना दिया। दूसरे हाइकु में आकाश, सागर और धरा के बीच सेतु रचकर कवि की दृष्टि और संवेदना हमें चमत्कृत किए बिना नहीं रहती।

गुजरात के साठोत्तरी कवियों ने मुक्तक तथा प्रबंध दोनों ही रूपों में रचनाएँ की हैं। प्रबंध रचना में रुप–गत वैशिष्ट्य के कारण युग के मूलभूत द्वन्द्व और तनाव का, संघर्षशील मानवीय चेतना की आन्तरिक प्रेरणाओं और सरोकारों का, युगीन यथार्थ के संश्लिष्ट स्वरूप और व्यक्ति–मन की तीव्र प्रश्नाकुलताओं का अपेक्षाकृत अधिक मूर्त अनुभव–बिम्ब के रूप में चित्रित किया जा सकता है। लेकिन मानव–मन के इतने विशाल फलक पर चित्रित करने के लिए प्रबन्ध–रचना में कथा–निर्वाह के आग्रह के कारण बहुत

कुछ भरती की सामग्री का प्रवेश अनिवार्य बन जाता है। पर आज के युग की प्रबन्ध रचनाएँ बाहरी और भीतरी यथार्थ के संश्लिष्ट स्वरूप के चित्रण की एक ईमानदार और सर्जनात्मक कोशिश की प्रतीति कराती हैं। यह वस्तुगत् न होकर आत्मगत हैं।

प्रायः सभी प्रबन्ध रचनाओं में पुरा–कथाओं को आधार बनाकर युग की मूल–भूत समस्याओं, विघटन और संक्रमण की स्थितियों का चित्रण एवं निरूपण किया गया है। यों तो नवें दशक की कविताओं में भी मिथकीय चरित्रों और प्रसंगों का उपयोग खुलकर हुआ है, यथा –

– दिन हुए धृतराष्ट्र / रातें गांधारी

– क्या हुए अभिमन्यु के व्यूहभेदी दाव

– हर झूठ को / प्रतीक्षा रहती है एक युधिष्ठिरो की

– राम का आचरण देखकर / फिर अहल्या शिला हो गई

– जीवन में / थोड़ी सी सफलता / बना देती है हमारे अहम् को हिरण्यकश्यप

– सड़कों पर घूमते हुए एकलव्य / खोज रहे हैं द्रोण को

मिथकीय प्रतीकों और सांस्कृतिक संदर्भों के माध्यम से समय की विकृतियों और आदर्शों की अभिव्यक्ति प्रबन्ध–कविता में अपेक्षाकृत विस्तृत और बहु आयामी है। उनका प्रयोग संप्रेषण को सहज बनाने के लिए किया गया है। चूँकि मिथक प्रचलित और सर्व–ग्राह्य होते हैं, अतः इनके माध्यम से जीवन की सच्चाइयों और विसंगतियों का कथन सरलतापूर्वक और सर्वग्राह्य हो पाता है।

भारती का 'अन्धायुग' १९५४ की रचना है। यह वह काव्य–नाट्यात्मक प्रबन्ध है जिसमें महाभारतीय शिलापट्ट पर आधुनिक संवेदना का आस्थामय आलोक विकसित

हुआ है। इस प्रबन्ध की कथा का घटना–काल महाभारत के अठारवें दिन की संध्या से लेकर प्रभास तीर्थ में कृष्ण की मृत्यु के क्षण तक फैला हुआ है। इस ग्रन्थ में मूल्यगत संक्रमण और विघटन की त्रासदी की, आधुनिक काल की अस्तित्वगत दुश्चिन्ताओ और यातना को, युग के मूलभूत द्वन्द्व और तनाव को ऐसे संवेदनशील और प्रखर आत्मबिम्ब के रूप में उभारा गया है कि वह नए बोध और नई कला–चेतना का मूल्यवान दस्तावेज बन गया है।

भारती की दूसरी प्रबन्ध–रचना 'कनुप्रिया' छठे दशक के अन्तिम वर्ष की रचना है। इसमें जीवन की दो परस्पर विरोधी कुछ जटिल स्थितियों को आमने सामने रखकर मूल्यबोध के स्तर पर जीवन की कुछ जटिल स्थितियों को समझने का प्रयत्न किया गया है। राधा के आत्मानुभव के रूप में भारती ने यह प्रश्न उठाया है कि इतिहास की दुर्दान्त शक्तियों के बीच व्यक्ति की आत्मवत्ता का, उसके अपने राग और संवेदन का मूल्य क्या है?

नरेश मेहता का प्रबन्ध काव्य 'संश्य की एक रात' का कथा स्रोत रामायण की कथा–लंका युद्ध से पूर्व समुद्रतट पर राम की सेना का अति संघटित अंश है। इस काव्य–ग्रंथ का कवि वैचारिकता के निकट पहुँचकर युद्ध और शान्ति की समस्या पर मुख्य रूप से आना चाहता है। प्रबन्ध की कसौटी पर सफल इस कृति में मूल्यों का ऊहापोह है, एक अन्वेषण है। संशय और शंकाओं से निकलकर कर्मवादी जीवन दर्शन का स्वीकार इसका प्रतिपाद्य है।

अपनी दूसरी प्रबन्ध कृति 'महाप्रस्थान' में नरेश मेहता ने महाभारत के अन्तिम प्रसंग 'स्वर्गारोहण' को युग यथार्थ से सम्पृक्त कर नयी अर्थवत्ता और नया संदर्भ दिया है। आज की अमानवीय राज्य–व्यवस्था और गिरते हुए राजनीतिक मूल्यों के संदर्भ में नरेश

मेहता ने पहली बार 'महाप्रस्थान' में जो विश्लेषण प्रस्तुत किया है वह पर्याप्त सार्थक एवं संगत है। इस कृति की मूल संवेदना राज्य व्यवस्थाजन्य विसंगतियों को उभार कर मानव शक्ति की कामना रही है।

कवि कुँवर नारायण का एक चर्चित प्रबन्ध काव्य 'आत्मजयी' है। इसमें कथा का आधार कठोपनिषद् की कथा 'नचिकेता' है। नचिकेता को यम से जो तीन वर प्राप्त हुए हैं उनमें से केवल दो, पिता वाज्रश्रवा का क्रोधशमन व प्रसन्नता और मृत्यु रहस्योद्घाटन 'आत्मजयी' में ग्रहीत हैं। इस कृति में विसंगतियों के बीच संगति व अनास्था के बीच आस्था की पुनर्प्राप्ति की कहानी नचिकेता के माध्यम से घटित और पल्लवित होती है। कृति का मूल प्रतिपाद्य यह है कि जीवन में सुखोपलब्धि ही सत्य नहीं, सार्थकोपलब्धि ही सत्य है।

'एक पुरुष और' डॉ. विनय का प्रबन्ध काव्य है जिसमें कवि के ही शब्दों में, 'कृति का वैचारिक धरातल आधुनिकता की चेतना में आज के मनुष्य की उस द्विधा का चित्रण भी करता है, जिसमें वह अप्राप्तियों की वेदना झेलते हुए, अन्दर बाहर के संघर्षों से जूझते हुए, आत्मबोध से जन्मे आचरण के प्रति भी प्रश्नाकुल होता है।' कृति के माध्यम से डॉ. विनय वर्तमान युग के आम आदमी के संकट को और साथ ही साथ सामाजिक नैतिक मूल्यों से सीधे टकराव को प्रस्तुत करते हैं। कथा में विश्वामित्र का संघर्ष आम आदमी का संघर्ष है और द्वन्द्व का भय उस सुविधा भोगी व्यवस्था का भय है जो अपनी कुर्सी को जाते हुए देख काँपने लगती है। विश्वामित्र की तरह 'एक पुरुष और' की मेनका आज की विद्रोहिणी नारी का प्रतिनिधित्व करनेवाली नारी है।

डॉ. जगदीश गुप्त रचित 'शम्बूक' नाट्य-काव्य शिल्प में लिखी जानेवाली रचना है। इसमें राम के चरित्र को नए परिवेश में प्रस्तुत किया गया है साथ ही 'भूमिपुत्र' शम्बूक

को भी नयी शक्तिमत्ता देकर प्रस्तुत किया गया है। 'शम्बूक' के माध्यम से वर्ण-व्यवस्था के विरुद्ध और सत्ता-पक्ष के खिलाफ सवालिया निशान खड़े किए हैं। और जिस प्रकार शम्बूक के माध्यम से भारतीय जनतन्त्रात्मक गणराज्य में व्यवस्था के द्वारा बलात् दबायी जाने वाली आवाज को उठाया है, वही शम्बूक की मौलिक पहचान है।

प्रबन्ध काव्यों की ताज़ी श्रेणी में गुजरात के सशक्त कवि डॉ. अम्बाशंकर नागर का खण्ड-काव्य 'प्रम्लोचा' है। उस खण्डकाव्य का कथा-सार है तपस्वी कुण्ड ऋषि तथा अप्सरा प्रम्लोचा की प्रणय-कथा । इन्द्र ने जानकर कि गोदावरी नदी के पुरुषोत्तम क्षेत्र में महर्षि कण्डु उग्र तपश्चर्या में लीन हैं, अपना सिंहासन बचाने के लिए मुनि का तपोभंग करवाने के लिए रूपसी अप्सरा, प्रम्लोचा को भेजा। कण्डु सुदीर्घ काल तक मोहासक्त रकह कर एक दिन सूर्यास्त का दृश्य देखकर मोह निद्रा से अलग होते हैं। पुरुषोतम क्षेत्र में लौटकर पुनः घोर तप करते हुए मोक्ष को प्राप्त होते हैं।

'प्रम्लोचा' तीन सर्गो में विभक्त काव्य है। 'प्रादुर्भाव' सर्ग में ऋषि और प्रम्लोचा के प्रणय-प्रसंग का प्रादुर्भाव- 'प्रणय' नामक दूसरे सर्ग में प्रणय परिणय, मिलन, समर्पण आदि का रोचक वर्णन और अन्तिम सर्ग प्रत्यभिज्ञान में ऋषि के ज्ञानोदय, पश्चाताप, प्रम्लोचा की नारी सुलभ प्रवृत्ति, नारी की प्रकृति आदि का सुन्दर वर्णन है। कवि का अभिप्रेत घटना वर्णन से अधिक पात्रों के चरित्र-चित्रण पर ही अधिक है।

इस कृति का सर्वोत्तम सर्ग है 'प्रणय'। भावुकता, कल्पना और संवेदना से छलकता यह सर्ग एक सशक्त कवि-हृदय की गवाही देता है। अन्तिम सर्ग विचार-प्रधान सर्ग है। डॉ. सी. एल. प्रभात के शब्दों में 'नहुष' (मैथिलीशरण गुप्त), 'कनुप्रिया' (भारती), 'एक कण्ठ विषपायी' (दुष्यन्त), 'महाप्रस्थान' (नरेश मेहता) और 'एक प्रश्न मृत्यु' (विनय) जैसे आधुनिक मिथकीय आधारों पर लिखे काव्यों की परम्परा मे

'प्रम्लोचा' भी आदर से याद की जाएगी। आधुनिक साहित्य में यह अपने ढंग का एक नया प्रयोग है।

प्रचलित और सर्वग्राह्य होने के कारण मिथकों में संप्रेषणीपता की अपार शक्ति होती है। इन्हीं मिथकों का प्रयोग डॉ. किशोर काबरा ने अपने पाँच प्रबन्ध काव्यों में किया – जिसका संक्षिप्त उल्लेख इस प्रकार है –

'परिताप के पाँच क्षण' में शरशय्या पर लेटे भीष्म परिताप के पाँच क्षणों की यातना पाँच युगों की तरह भोग रहे हैं। कृति का प्रतिवाद्य यही पाँच क्षण हैं। भीष्म आज के खोखले पौरुषेय आदर्श को चरितार्थ करते हैं तो नारी पात्र अम्बा में आज की नारी की विवशता, आक्रोश, अतृप्ति, प्रतिशोध, प्रतिफलित है।

दूसरा प्रबन्ध काव्य 'धनुषभंग' है। इस कृति में प्रतीक रूप से धनुष का टूटना परम्परागत जड़ता का टूटना है, सीता जनता की आकांक्षाओं का प्रतीक है। धनुष भंग निःशस्त्रीकरण की ओर भी इंगित करता है। पूरी कृति आधुनिक जीवन दृष्टि और समय-बोध की साक्षी है।

तीसरी कृति 'नरो वा कुंजरो वा' का कथ्य महाभारत से उठाया गया है। इसके नायक द्रोण हैं। कवि के ही शब्दो में 'इस कृति में अर्द्धसत्य पर टिके हुए द्रोणाचार्य के जीवन-दर्शन की वह प्रतीक-कथा है, जो दूध के मुहाने से प्रारम्भ होकर रक्त के महासागर पर समाप्त होती है।'

कथा में प्रकारान्तर से एकलव्य, द्रौपदी, अभिमन्यु और अश्वत्थामा को शोषित वर्गों के प्रतीक रूप में प्रस्तुत किया है।

अपने चौथे प्रबन्ध काव्य 'उत्तर महाभारत' का कथ्य काबराजी ने महाभारत के सत्रहवें और अठारवें पर्व से उठाया है। विजय के बाद भी विरक्त मन से युधिष्ठिर, द्रौपदी और चारों भाइयों के साथ हिमालय में मृत्यु के लिए चल पड़ते हैं। इस महायात्रा में भीम के प्रश्नों और युधिष्ठिर के उत्तरों को कथा के रूप में नियोजित कर काबरा जी ने 'उत्तर महाभारत' की रचना की है। कवि द्वारा इस कथ्य के माध्यम से दार्शनिकता, धर्माभिव्यक्ति, नारी शक्ति, नारी जागरण, सफल गृहस्थ जीवन आदि का विवेचन कवि की इस उक्ति को सार्थक करता है कि 'आज के मनुष्य के लिए इस कहानी में आनेवाले कल की कई संभावनाएँ छिपी हैं।'

काबरा जी का नवीनतम पाँचवा प्रबन्ध काव्य है – 'उत्तर रामायण' एक धोबी के निर्मूल आक्षेप से व्यथित हो राम द्वारा सीता को वनवास दिया गया। सम्पूर्ण कथ्य सीता के आसपास घूमता हैं। इस मिथक के आधार पर काबरा जी ने व्यक्ति, समाज, राष्ट्र एवं विश्व से सरोकार रखनेवाली अनेक समस्याओं पर अपने विचार व्यक्त किए हैं।

दशवें दशक में ही गुजरात के एक अन्य कवि जयसिंह व्यथित ने चार प्रबन्ध काव्य रचे हैं। 'आर्तनाद' रामायण कथा से उठाया गया कथ्य है। 'राघवेन्दु' की कथा भी रामायण से ली गई है। तीसरी कृति 'दलितों का मसीहा' में बाबासाहब अम्बेडकर का जीवनवृत्त है। चौथा खण्ड काव्य है 'बालकृष्ण', जो प्रमुखतः बालोपयोगी है। और अन्तिम खण्ड–काव्य है – 'कैकयी के राम'। इस कृति में मुख्य पात्र है कैकयी।

साठोत्तरी गुजरात के हिन्दी साहित्य में पुरावर्तित सोच का प्रभाव भी संलग्न है और आधुनिक संचेतना के संस्पर्श भी हैं। डॉ. रमणलाल पाठक ने इस संदर्भ में अपना स्पष्ट मंतव्य प्रस्तुत किया है। वह कहते हैं कि –

सन् २००३ तक गुजरात के समकालीन साहित्य के अवदान का समवेत रूप मे आकलन करता हुआ कोई इतिहास अभी तक प्रकाश में नहीं आया। विगत ४०–५० वर्षों में वैविध्यपूर्ण काव्यग्रंथों की अधिकता के साथ कहानी, उपन्यास, निबंध, नाटक, रीपोर्ताज, अनुवाद, लघुकथा, चुटकुले, पत्र, संवाद आदि का परिणाम विपुल रहा है। अतः तकाजा महसूस किया जाता है कि गुजरात में निर्मित हिन्दी साहित्य–सामग्री का समवेत एवं सम्यक रूप में आकलन करने वाला इतिहास शीघ्रतातिशीघ्र प्रकाशित हो।

काव्य के विविध रूप :

समकालीन हिन्दी साहित्य के इतिहास का काव्य फलक महाकाव्य से लेकर हाइकु तक के सभी गुरु लघु प्रकारों की दृष्टि से वैविध्यपूर्ण एवं सुविशाल है। समकालीन काव्य में केवल वर्तमान के ही नहीं बल्कि अतीत के संदर्भ एवं अनागत की संभावनाएँ भी प्रचुर परिणाम में संन्निहित हैं। गुर्जर भूमि में निर्मित काव्यग्रंथ गुजरात को अखिल भारतीय साहित्य के विविध संदर्भों को न केवल संकेतित करते हैं अपितु उन सब के साथ अभिन्न कड़ी के रूप में श्रृंखलित भी करते हैं। इसमें अनेक कवि पीढ़ियों के भी स्वर सुनाई देते हैं। अम्बाशंकर नागर, किशोर काबरा, भागवतप्रसाद मिश्र 'नियाज', डॉ. विष्णु विराट, डॉ पारूकान्त देसाई, सुल्तान अहमद, डॉ. रोहित श्याम चतुर्वेदी, डॉ. रामकुमार गुप्त, अविनाश श्रीवास्तव, जयसिंह 'व्यथित', भगवानदास जैन, डॉ. रमाकान्त शर्मा, सुधा श्रीवास्तव, घनश्याम अग्रवाल, कमल पुंजाणी, कान्तिलाल शाह आदि केवल ख्याति प्राप्त ही नहीं, यशस्वी कवियों का स्वर प्रभावक रहा है। इन विशिष्ट कवियों ने अपने बाद की नई पीढ़ी के जो कवि पिछले कुछ वर्षों से लिख रहे हैं, उनके मार्गदर्शक रहने के साथ–साथ उनके प्रेरक–प्रोत्साहक भी रहे हैं। नये कवियों में जिनका एक ग्रंथ प्रकाशित हो चुका है, उनकी संख्या तीन दर्जन के करीब है। ऐसे रचनाकारों में नलिनी पुरोहित, रानु

मुखर्जी, निर्झरी मेहता, मधुमालती चौकसी, डॉ. रचना निगम, सुषमा श्रीवास्तव, मीरा रामनिवास, निर्मला असनानी, क्रांति येवतीकर, सुनन्दा, उत्तरा चीनूबाई आदि समुल्लेखनीय हैं। विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में जिनकी अनेक कविताएँ प्रशस्ति प्राप्त एवं प्रकाशित हो चुकी हैं, उनमें श्रीमती अनिता सक्सेना, रेनू सक्सेना, आशा वाणी, आशा विश्वनाथ, उर्मिला मजीठिया, जयश्री जोशी, उमा अरोरा, गोपाल शुक्ल, नयना डेलीवाला, नरेन्द्र दवे, दिव्या गोसलिया, डॉ. लता सुमंत, सुधा सिन्हा, शुभांगिनी पाटणकर, स्वाति श्रीवास्तव आदि की कृतियों में कविता की सार्थक रचना शक्ति के प्रति जागरूकता है। इन रचनाधर्मियों की कृतियों से विश्वास बँधता है कि आगामी दसेक वर्षों में गुजरात की हिन्दी सेवा अन्य प्रदेशों की हिन्दी सेवा की तुलना में काफी आगे बढ़ चुकी होगी। इन रचनाकारों में भाव एवं विचारगत वैविध्य के साथ–साथ भाषा–शैलीगत प्रयोगशीलता भी दृष्टिगत होती है।

लगु काव्य रूपः हाइकु :

लघु काव्य रूपों का लोकप्रिय सर्जन पिछले ३५–४० वर्षों से अधिक बढ़ रहा है। रचनाकर्म की सरपलता, लघु भावों, कल्पनाओं, अनुभूतियों अनुभावों का चार–चार, पाँच–पाँच पंक्तियों में या थोड़े से थोरे शब्दों में व्यक्त कर पाने की सुकरता, वाचकों को तत्काल आनंदलाभ कराने की क्षमता, मुशायरे – मंचीय प्रवृत्ति में सुगमता आदि अनेक कारणों से लघुकाव्य रूपों का निर्माण बढ़ता जा रहा है। गुजरात के समकालीन लघुकाव्यों में विपुल एवं महत्तवपूर्ण योगदान दिया है हाइकु ने। इसका दस्तावेजी आलेख डॉ. भगवतशरण अग्रवाल 'हाइकु भारती' पत्रिका में समय–समय पर पेश करते आ रहे हैं। हजारों की संख्या में ऐसे हाइकु के नज़राने गुजरात के रचनाकारों ने पेश किए हैं जो अखिल भारतीय हाइकु काव्य संग्रहों में स्थान पाते रहे हैं। वरिष्ठ हाइकुकारों में प्रथम

स्थान के अधिकारी हैं भगवतशरण अग्रवाल। अग्रवाल जी के 'अर्ध्य' नामक हाइकु संग्रह (१९९५) का देश–विदेशों में व्यापक स्वागत हुआ और पचास से भी अधिक पत्र–पत्रिकाओ में 'अर्ध्य' की समीक्षाएँ प्रकाशित हुई। मुकेश रावल, रमेशचंद्र शर्मा आदि के सहस्त्राधिक सदे हुए हाइकु कविताओं के कारण उनको मानद उपाधियाँ भी भारत के विभिन्न भूभागों की पत्रिकाओं के द्वारा प्रदान की गई हैं। कम्प्युटर युग की मार्मिक काव्यगुणसंयुक्त एवं प्रभावशाली अन्य लघुकविताओं में हाइकु कविता काफी महत्वपूर्ण स्थान रखती है।

गुजरात के बहुत कम हिन्दी विद्वानों को डॉ. मुकेश रावल के महत अवदान की जानकारी है। चित्रात्मकता, सौंदर्यविधान एवं शास्त्रीयतानिर्वाह की दृष्टि से रावल जी गुजरात में स्तरीय हाइकुकारों में अग्रस्तानीय हैं। इनके अतिरिक्त आ. रघुनाथ भट्ट ने भी हाइकुकारों की पंक्ति में अग्रगण्य स्थान प्राप्त किया है। उनकी 'हाइकु शती' और 'हाइकु त्रिशती' स्तरीय रचनाएँ हैं। 'कौध' के सर्जक रमेशचन्द्र शर्माजी ने भी डेढ़ दो हजार की संख्या में स्तरीय हाइकु रचे हैं। कन्हैयालाल चौहाण, अश्विनीकुमार पाण्डेय आदि का हाइकु और गजल दोनों में सराहनीय, बहुचर्चित अवदान है। शीला घोंडे गुजराती एवं हिन्दी के साथ मराठी भाषा–साहित्य से संस्कार संपन्न हैं।

दोहा :

प्राचीन दोहा काव्य रूप की सर्जना भी काफी नई सजधज के साथ सैकडों की संख्या में हो रही है। दोहाकारों में पारूकान्त देसाई ने सैकड़ों की संख्या में दोहे लिखे है जो विषय वैविध्यपूर्ण की दृष्टि से विशेष उल्लेखनीय हैं। द्वारिकाप्रसाद चौबे 'द्वारिकेशु' द्वारा रचित 'द्वारकेशु सतसयी' काफ़ी चर्चित है। आपके दोहों पर ब्रजभाषा की कमनीयता के छोंक का मधुर एहसास होता है। हिन्दी के सन्निष्ठ कवि मुंशीलाल मिश्र के दोहे एवं

कुंडलियाँ – दोनों, काफी संख्या में विभिन्न पत्र–पत्रिकाओं में निकलते रहे हैं। इनके उपरात भागवत प्रसाद मिश्र 'नियाज' कृत भक्ति सुधा के दोहे समुल्लेखनीय हैं।

मुक्तक द्विपदियाँ :

गुजरात के समकालीन साहित्य भंडार में अपने–अपने मुक्तकों, द्विपदियाँ, दोहों आदि के द्वारा सराहनीय योगदान करनेवालों में 'रोशनी की तलाश में' निकले प्रतिष्ठित कविद्वय दयानंद जैन एवं भगवानदास जैन की रचनाएँ समुल्लेखनीय हैं। इस सिलसिले में डॉ. शिवाकनाटे का 'शारदोत्सव', जोज़फ अनवर कृत 'पगडंडियाँ' संग्रहों के साथ सुल्तान अहमद पठान के भी मुक्तक पठनीय हैं।

कुंडलियाँ :

प्राचीन एवं प्रतिष्ठित काव्यरूप कुंडलियाँ के जो नये संग्रह प्रकाशित हुए है, वे भी सराहनीय है। इस संदर्भ में डॉ. माणिक मृगेश का सद्य प्रकाशित 'तोल मोल के बोल' संग्रह के साथ मस्तराम गहलोत 'मस्त' की कुंडलियाँ इस वास्ते भी सम्मुलेखनीय है कि दोनों सर्जक हिन्दी की इस काव्यविधा के सशक्त हस्ताक्षर हैं और दोनों ने कुंडलियाँ को सामाजिक एवं राजनैतिक वयंग्य के सशक्त माध्यम के रूप में सफलता से आजमाया है। डॉ. माणिक मृगेश मूलतः सधे हुए व्रजभाषी कवि होने के कारण उनकी कुंडलियों में भाषा की कोमल शब्दावली का जो सहज समन्वय हुआ है, उससे उनकी कुंडलियाँ और धारदार एवं प्रभावक बन पड़ी हैं।

ग़ज़ल :

गुजरात में लिखी जानेवाली वैविध्यपूर्ण ग़ज़लों के रचनाकारों और उनकी रचनाओं का समवेत रूप में प्रकाशन करानेवाली कोई हिन्दी मासिक पत्रिका नज़र नहीं आती है।

SMT. HANSA MEHTA LIBRARY M. S. University of Baroda

बडौदा के डॉ रशीदमीर जो स्वयं गुजराती और हिन्दी के एक मँजे हुए गज़लकार हैं – 'धबक' नामक गुजराती पत्रिका निकालते हैं जिसमें प्रायः गुजराती गजलें विशेष रूप से प्रकाशित होती रही हैं। शायर रशीदमीर की विशेषता यह है कि इन्होंने गजल के सौन्दर्यशास्त्र पर गुजराती भाषा में पीएच. डी. शोधकार्य पर डॉक्ट्रेट प्राप्त की है। डॉ. कांतिलाल एम. शाह एवं डॉ. रशीदमीर दोनों के सुन्दर कविता संग्रह प्रकाशित है, जिनमें उनकी कुछ स्तरीय गज़लें भी संकलित हैं। ऋषिपाल धीमान कृत 'हवा के कौंधे पे' नामक गज़ल में गज़ल, लम्बी कविता तथा कुछ मुक्तक हैं। कवि का कथन है कि – 'मैंने जो देखा, सुना, सोचा है, भोगा है बस वही तुमको सुनाने के लिए आया हूँ।' डॉ. किशोर काबरा, डॉ. अम्बाशंकर नागर, जयसिंह व्यथित आदि मूलतः प्रबंध चेतना के सशक्त हस्ताक्षर हैं। यह बात अलग है कि वे गज़ल का माहौल देखकर कुछ स्तरीय गज़लें लिख लें। जिनकी मूल काव्य चेतना गज़लाना है वैसे नामी पक्के गज़लकारों में शेखादम आबूवाला, सुलतान अहमद, डॉ. दयाचंद जैन, वसीम मलिक, डॉ. भगवानदास जैन, नवनीत ठक्कर, अश्विनीकुमार पाण्डेय, मरियम गजाला, सुरेश शर्मा कांत, रमेशचंद्र शर्मा समुल्लेखनीय हैं।

महाकाव्य एवं खण्डकाव्य :

कबीर एवं रवीन्द्रनाथ टागोर ने परंपरित काव्य प्रकारों में निरूपित प्रबंध काव्य जैसा कोई महाकाव्य नहीं लिखा जैसे कि जयशंकर प्रसाद, मैथिलीशरण गुप्त जी ने लिखे हैं फिर भी उनको महाकवि के रूप में स्वीकारा गया है। क्यों? सवाल है व्यक्ति की चेतना की समग्रता, अखण्डता एवं महानता का। शाश्वत एवं समकालीन चेतना के यशस्वी साहित्यकार डॉ. किशोर काबरा गुजरात के समकालीन महाकवि की सभा में प्रथम स्थानीय है। उनके एकदम निकट में प्रबंध चेतना एवं निसर्गदत्त सर्गशक्ति के सिद्ध कवियों

में डॉ. अम्बाशंकर नागर 'प्रम्लोचा' के आधार पर समुल्लेखनीय हैं। श्री जयसिंह जी मूलतः प्रबंध चेतना के ही कवि है, किन्तु विद्वानों की नजर में उनके काव्य में वह भाषा शैलीगत कसाव नजर नहीं आता जो डॉ. नागर के 'प्रम्लोचा' और किशोर काबरा के उत्तर रामायण, उत्तर महाभारतादि में सिद्ध है। यों तो विष्णु चतुर्वेदी 'विराट' ने भी कर्ण, निर्वसना, खण्डकाव्य तथा सुलतान अहमद ने लम्बी कवितायें लिखी हैं किन्तु वे दोनों सफल सशक्त प्रभावी कवियों के रूप में विशेष आदर प्राप्त हैं।

गद्य के विविध रूप :

भारत की प्रायः सभी भाषाओं के इतिहासों को ध्यान से देखने पर प्रतीत होता है कि काव्य की अपेक्षा उनमें गद्य के विविधरूपों का प्रतिनिधित्व करनेवाली कृतियों की संख्या कम होती जा रही है। काव्य के विविध रूप यदि संख्या की दृष्टि से प्रथम स्तानीय हैं और गद्य के रूप द्वितीय। यह भी देखने को मिलता है कि काव्य में पिछले कुछ वर्षों से ग़ज़ल, हाइकु तथा क्षणिकाओं का परिणाम अधिक रहा है, वैसे गद्य में लघुकथा (लघु कहानी), व्यंग्य, कहानी एवं चुटकुले अधिक संख्या में लिखे जाते रहे हैं। राष्ट्रवीणा, भाषासेतु, साहित्य संहिता आदि पत्रिकाओं के अंकों में दो तीन लघुकथाएँ एवं व्यंग्य पढने को मिलते ही हैं। काबरा के एक चुटकी आसमान, एक टुकड़ा जमीन, बूँद–बूँद कड़वा सच समुल्लेखनीय हैं।

डॉ. रानू मुखर्जी के दो कहानी संग्रह मेरे सामने हैं – 'मोर पर' और 'किसे पूकारूँ'। 'किसे पूकारूँ' को राष्ट्रीय पुरस्कार मिला है। इनकी कहानियों के केन्द्र में प्रायः समाज के विविध स्तरों की नारियों के जीवन के कटु तिक्त एवं करुण प्रसंगों का आलेखन विशेष रहा है। 'मोड़ पर' में ग्यारह कहानियाँ हैं। प्रथम कहानी 'मोड़ पर' हैं उसमें सतीश बापू पुरुष पात्र की त्रासदी एवं 'किसे पूकारूँ' में एक कलाकार की मौत हृदयस्पर्शी अंकन

किया गया है। डॉ. चन्द्रकान्त मेहता के १. दिशान्तर, २. इसीलिए यहाँ नहीं आना, ३. जरा ठहर जाओ, ४. नहीं आया अभी समय आदि ख्याति प्राप्त कहानी संग्रह हैं, जिनमे उनकी मँजी हुई कथन शैली का एहसास होता रहता है।

स्त्री लेखिकाओं में डॉ. इन्दिरा दीवान, सुधा श्रीवास्तव, डॉ. प्रणव भारती, श्रीमती कमलेश सिंह आदि समुल्लेखनीय हैं। श्रीमती दीवान ने करीब २३ उपन्यास लिखे हैं, जिनमें से 'श्रीउड' उपन्यास शिल्प विधान की दृष्टि से ध्यानाकर्षक है। डॉ. सुधा श्रीवास्तव के दो उपन्यास देखने में आये हैं। 'बियाबान में उगते किंशुक' में दोहरे विचार, दोहरी मानसिकता, दोहरी संस्कृति और दोहरे मापदण्ड में फँसे व्यक्ति की समस्याओं का यथार्थपरक चित्रण है। इस पारिवारिक उपन्यास में 'नेहा मा' एवं 'तुहिना' की व्यक्तिगत प्रणय समस्या का अंकन किया गया है। मन्नू भंडारी के 'आपका बंटी' उपन्यास की स्मृति ताज़ा करानेवाला 'टच मी नोट' शीर्षक की लेखिका डॉ. प्रणव भारती के बालमानस की गुत्थियों को समझने एवं उन्हें उलझाने में उनके माता-पिता कैसे कई बार असफल साबित होते हैं और 'छुईमुई' के पौधे से बालक कैसे मुरझा जाते हैं, इनका हृदयस्पर्शी अंकन किया है। उपन्यास के नामी लेखकों में डॉ. अशोक शाह 'प्रतीक', केशुभाई देसाई, डॉ. सूर्यदीन यादव, घनश्याम अग्रवाल, शैलेश पंडित अग्रगण्य हैं।

डॉ. विष्णु विराट कवि व्यक्तित्व के सशक्त हस्ताक्षर हैं। उनके 'टूटती लकीरें', 'बंद कमरे की धूप' नामक दो उपन्यास प्रकाशित हैं। डॉ. शेखर जैन और डॉ. रजनीकांत जोशी ने भी, इस क्षेत्र में पदार्पण किया है। डॉ. जैन का 'मृत्युंजयी केवली राम' और डॉ. रजनीकांत जोशी का सद्यप्रकाशित 'तथास्तु' उपन्यास समुल्लेखनीय है। केशुभाई देसाई का 'दीमक' प्रतीकात्मक उपन्यास है जो १९६९ में गुजरात में हुए साम्प्रदायिक दंगों पर आधारित है। इसमें यह बताया गया है कि दीमक भी हमारे सामाजिक तन्दुरस्त जीवन को

खोखला कर देती है। लेखक ने बखूबी यह वर्णित किया है कि कैसे मुस्लिम दीमक मुसलमान 'बचू' को खा जाती है और हिन्दू दीमक 'ढींगा' को, जो एक मातृविहीन निर्दोष आदर्शवादी बच्ची है। डॉ. सूर्यदीन यादव भी यों तो सधे हुए हस्ताक्षर हैं, 'दूसरा आँचल' और 'माँ का आँचल' अपने दो उपन्यासों के लिए विद्वानों में चर्चित हैं और गुजरात में बसे हिन्दी भाषा-भाषी मजदूरों-कारीगरों-श्रमिकों को प्रिय हैं। रामदरश मिश्र के दूसरा घर, सुदर्शन मडीठिया के उखड़ी हुई आँधी आदि के समान यहाँ भी गुजरात के अन्य प्रदेशों से आकर जीवन निर्वाह करने को तड़पने वाले आम लोगों की ज़िंदगी का यथार्थ करुण दशाओं का अंकन किया गया है। डॉ. यादव ने अहमदाबाद का जो माहौल यहाँ प्रस्तुत किया है, वैसे करुण माहौल सूरत महानगर के कपड़ा मीलों, हीरों के कारखानों, फेक्टरियों आदि में कार्यरत आम जनता के दयनीय जीवन की याद दिला देते हैं।

'एक और कुरुक्षेत्र' के मूल लेखक चन्द्रकान्त ठक्कर हैं। नोन-एकेडेमिक व्यापारिक संस्थाओं के उच्चपदों पर कार्यरत इस महानुभाव को भारतीय जीवन का अंकन करनेवाले वेद, उपनिषद, महाभारत, रामायण आदि का गहरा अध्ययन है। चन्द्रकान्त ठक्कर अपने इस प्रथम उपन्यास प्रकाशन पर सफल प्रसूति करनेवाली नारी की सी खुशी को व्यक्त करते हैं। डॉ. नवनीत ठक्कर जो उनके लघु बंधु हैं, जो राष्ट्रीय पुरस्कार विजेता कवि हैं, वे एक सिद्धहस्त अनुवादक भी हैं, गुजराती एवं हिन्दी दोनों भाषाओं पर उनका समान अधिकार होने के कारण उन्होंने 'क्षणे क्षणे कुरूक्षेत्र' गुजराती उपन्यास का 'एक और कुरूक्षेत्र' शीर्षक से अनुवाद कर राष्ट्रभाषा को समर्पित किया है।

व्यंग्य :

भारत के साहित्यकारों में स्व. डॉ. सुदर्शन मजीठिया व्यंग्य विधा के स्थापक एवं प्रतिनिधि उपन्यासकार के रूप में सिद्ध-प्रसिद्ध हैं। उनके प्रायः सभी उपन्यास 'कागजी

सुलतान', 'इन्डिकेट बनाम सिन्डीकेट', 'लोहे की लाशें', 'तोपों के साये' आदि सार्थक, नुकीले व्यंग्य बाणों से आपूर्ण हैं। 'उखडी हुई आँधी' में गुजरात के छात्र आन्दोलन का कहानी है। 'नव निर्माण' के नाम से प्रख्यात प्रस्तुत उपन्यास के घटनाचक्र में भ्रष्टाचार, कमरतोड महँगाई और गरीबी है। बयालीस के बाद यह पहला मौका था जब गुजरात के तेवर इस प्रकार बदले थे। जो घटनाएँ इस दौरान सारे गुजरात में, समय-समय पर घटित होती थीं। उनको अखबारों में स्थान नहीं दिया जाता था क्योंकि सरकारी अंकुश था। रेडियो से तो इन समाचारों को ब्लेक आउट किया जाता था। जो दूसरा वर्ग था पूँजिपतियों का उसका इस छात्र आन्दोलन से कोई सरोकार नहीं था, क्योंकि वे अपने-अपने उल्लू सीधे करने में लगे हुए थे। सुदर्शन जी के 'कागजी सुलतान' नामक व्यंग्य-प्रचुर उपन्यास को पढ़ते वक्त उसकी व्यंग्यात्मकता प्रारंभ से अंत तक बरकरार रहने के बावजूद ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे हम वाकई कोई ललित रचना पढ़ रहे हों। पढ़ते सयम दिलोदिमाग पर एक प्रकार का हल्का-फुल्कापन बना रहता है। व्यंग्य साहित्य विषयक अनेक प्रकार की प्रचलित एवं भ्रान्त अवधारणाओं के कारण हम यह मानकर चलते हैं कि शुद्ध व्यंग्य प्रधान रचना निरी बौद्धिक, हठाग्रही एवं मारक ही होनी चाहिए जबकि मेरे विचार से एक प्रकार की सरसता व्यंग्य रचना का आवश्यक तत्व हैं और मजीठिया जी की कई रचनाओं में यह तत्व पर्याप्त मात्रा में है और यही उनकी मौलिक उपलब्धि हैं जिसके कारण हम उनकी तरफ बरबस आकर्षित हो जाते हैं। व्यंग्य विधा का प्रतिनिधित्व करनेवाले गुजराती के सिद्धहस्त व्यंग्यकार ज्योतिन्द्र दवे, रतिलाल बोरीसागर, विनोद भट्‌ट आदि की हास्य व्यंग्य परक रचनाएँ जो कि हिन्दी में आई हैं वे सामान्य-जन के द्वारा भी हंसी खुशी से पढ़ी जाती रही हैं। कई नए व्यंग्यकारों को तो व्यंग्य लेखन की प्रेरणा गुजरात के इन व्यंग्य लेखकों से भी मिलती रही है। इस सन्दर्भ में शेक्सपीअर का श्राद्ध, मूल लेखक बकुल त्रिपाठी, अनुवादिका भागरानी कालरा तथा मेरा

मरीज (व्यंग्य संकलन), मूल संपादक–विनोद भट्ट और अनुवादक–डॉ. विष्णु प्रसाद ओझा आदि ग्रंथ समुल्लेखनीय हैं।

यात्रा :

डॉ. अम्बाशंकर नागर, डॉ. रमाकान्त शर्मा, डॉ. घनश्याम अग्रवाल आदि गुजरात के साहित्यकार विदेशों में विभिन्न साहित्य–संस्थाओं की ओर से आमंत्रित होते रहे हैं। रमाकान्त शर्मा जी का यात्रा वृतांत 'कुछ अपनी बातें' ग्रंथ प्रकाशित है। समकालीन गुजरात के हिन्दी साहित्यकारों के सौराष्ट्रीय प्रतिनिधि के रूप में डॉ. घनश्याम अग्रवाल सुविदित हैं। उनका यात्रा वृतांत 'सौनेरी देश' नाम से प्रकाशित है, वह पठनीय है।

ललित निबंध :

ललित निबंध एक ऐसी विधा है जो सहृदयों को प्रभावित करती रहती है। गुजरात में डॉ. भोलाभाई पटेल द्वारा विद्यानिवास मिश्र जी के ललित निबंधों का स्वतंत्र संकलन भी प्रकाशित किया गया है। डॉ. चन्द्रकान्त मेहता गुजरात के अखबारों में वर्षों से चिन्तात्मक एवं ललित निबंध लिखते लिखते उदीयमान लेखकों के लिए मानक भी हो चुके हैं। मुझे डॉ. मेहता के व्यक्तित्व में दो चीज़ें–चिंतन एवं लालित्य एक साथ मिलती हैं। 'एक झील अन्दर भी', 'साथ–साथ चल रही किरण', 'कहाँ रूका है काफ़िला', 'दिया जलाना कब मना है', 'तलाश एक नए आसमान की' आदि उनके निबंध संग्रहों को दत्तचित्त होकर पढने से शायद आप भी मेरे इस अभिमत से सहमत हो सकते हैं। 'साथ–साथ चल रही किरण' पिछले वर्ष राष्ट्रीय पुरस्कार से समलंकृत है। उनका आत्कथ्य 'मेरे ये चिंतन प्रधान ललित निबंध जीवन और जगत को मैंने जैसे देखा है, इसके साक्ष्य मात्र नहीं है, जीवन को मैं जैसे देखना चाहता हूँ इसका भी प्रतिघोष है। यह एक विचार यात्रा है। सत्य एक है लेकिन उस तक पहुँचने के रास्ते अनेक हैं। मेरे निबंध को मैंने कोरे

आकाशयात्री बनने नहीं दिया। धरती की वास्तविकता के परिव्राजक एवं परिवितरक बनने का पर्याप्त स्वातंत्र्य भी दिया है। इस अर्थ में ये निबंध भी हैं और निर्बंध भी।'

आचार्य रघुनाथ भट्ट्ट द्वारा संपादित आलोचनात्मक निबंध संग्रह भी समुल्लेखनीय हैं। डॉ. अम्बाशंकर नागर जी के प्रबंध काव्य 'प्रम्लोचा' के संदर्भ में उनकी काव्य चेतना पर राष्ट्रीय स्तर के समीक्षकों के २५ महत्वपूर्ण निबन्धों का सर्वांगीण संकलन गु.प्रा.रा.प्र.स. की ओर से प्रकाशित हुआ है। इस संस्था की ओर से 'भावन–मनभावन' का प्रकाशन हुआ है जिसमें स्वयं रघुनाथ भट्ट्ट जी के राष्ट्रीय स्तर की विभिन्न साहित्यिक कृतियों पर समय–समय पर लिखे साहित्यिक श्रेष्ठ निबन्धों का सुष्टु संकलन है। इस संकलन में गुजरात की कालजयी कृतियों पर भी गहरा अध्ययन और विश्लेषण प्रस्तुत किया गया है। हिन्दी और गुजराती की प्रतिनिधि रचनाओं एवं कवियों पर डॉ. रजनीकान्त जोशी जी ने भी साहित्यिक निबंध लिखे हैं। डॉ. किशोर काबरा ने अपने 'साहित्यिक निबंध' संग्रह के बारे में लिखा है – 'इसमें कवि है, कलम है, कागज़ है। इसमें भूमि है, भूमिका है, भौमिकता है।'

प्रस्तुत अध्याय में साठोत्तर गुजरात के हिन्दी साहित्य का परिचयात्मक विकास तथा उसके मूल स्वरूप का विहंगावलोकन प्रस्तुत किया गया है। अगले अध्याय में साठोत्तरी गुजरात के हिन्दी साहित्यकारों के व्यक्तित्व एवं कृतित्व पर सीधी चर्चा की जाएगी।

संदर्भ

१. गुजरात का मध्यकालीन हिन्दी काव्य – डॉ. भगवतशरण अग्रवाल, पृ. १७

२. गुजरात के संतों की हिन्दी वाणी, पृ. २७

३. वही, पृ. २९

४. वही

५. वही

६. वही

७. वही

८. वही

९. वही

१०. वही

११. वही

१२. वही

१३. वही

१४. वही

१५. वही

१६. वही

१७. वही

१८. वही

१९. वही

२०. वही

२१. वही

२२. गुजरात की हिन्दी काव्य परम्परा, ज्योति छांजड़, पृ. १४१

२३. पछवा के हस्ताक्षर – किशोर काबरा, पृ. १६

२४. मुकेश रावल – सबरस – संपा. भगवतशरण अग्रवाल, पृ. १२

२५. वही, पृ. २५

२६. वही, पृ. ३०

२७. गुर्जरी, व्रज और उर्दू की विलुप्त कड़ी – डॉ. अंबाशंकर नागर – विराट अभिनंदन ग्रंथ, पृ. ११८

२८. पछवा के हस्ताक्षर, पृ. १५

२९. वही, पृ. १८

३०. गुजरात की समकालीन हिन्दी कविता – डॉ. अंबाशंकर नागर, पृ. १४९

३१. देखिए : आदमी – किशोर काबरा

३२. देखिए : फूल – रमाकान्त शर्मा

३३. देखिए : आज और कल – अम्बाशंकर नागर

३४. देखिए : गुनहगार – भगवतशरण अग्रवाल

३५. देखिए : मिट्टी की तासीर – रामकुमार गुप्त

३६. देखिए : अगर बचे रहे – सुल्तान अहमद

३७. देखिए : रोटियाँ – दयाचन्द जैन

३८. देखिए : मेरा देश महान – निर्मला असनानी

३९. देखिए : मेरे गीत – रमाकान्त शर्मा

४० डॉ शेखर जैन

४१. देखिए : हम सब शतरंज के मोहरे हैं – अम्बाशंकर नागर

४२. मरियम गजाला

४३. मंजु महिमा

४४. देखिए : तनी हुई प्रत्यंचा के बीच – अविनाश श्रीवास्तव

४५. देखिए : क्रांति की मशाल – दयाचन्द जैन

४६. देखिए : एक धागे में सभी ऋतुएँ पिरोए – अविनाश श्रीवास्तव

४७. देखिए : एक अनुभूति – अंबाशंकर नागर

४८. अंजना संधीर

४९. नथमल केडिया

५०. देखिए : लहरों का दर्पण – द्वारकाप्रसाद साँचीहर

५१. देखिए : क्षणिकाएँ – नलिनी पुरोहित

५२. देखिए : रेत की मछली – सुधा श्रीवास्तव

५३. देखिए : मेरा अपना गाँव – जयसिंह व्यथित

५४. देखिए : समय साक्ष्य है। – डॉ. विष्णु विराट

५५. भगवती सिंह नागदंत

५६. गुजरात का समकालीन हिन्दी साहित्य – संपा. अंबाशंकर नागर, पृ. १६४

५७. देखिए : नवद्वीप – डॉ. रमाकान्त शर्मा

५८. देखिए : बिंदिया के बोल – रामकुमार गुप्त

५९. देखिए : उगते सूरज – रामकुमार यादव, पृ. २५

६०. देखिए : उगते सूरज, पृ. ८१

६१. देखिए : उगते सूरज – आर.डी. शुक्ल, पृ. ९२

६२. वही – भगवतशरण अग्रवाल, पृ. ९

६३. देखिए : अवाक् के चाक पर – द्वारका प्रसाद साँचीहर

६४. गुजरात की समकालीन गीत यात्रा – आ. रघुनाथ भट्ट – अभिनन्दन ग्रंथ, पृ. २५६